दृष्टि The Vision

यू.जी.सी./एन.टी.ए.

नेट/जे.आर.एफ.

इतिहास

नवीन परीक्षा प्रणाली पर आधारित

जूनियर रिसर्च फेलोशिप और असिस्टेंट प्रोफेसर
की परीक्षा का संपूर्ण पाठ्यक्रम

प्रश्नपत्र–II

- JNU, BHU, DU समेत सभी विश्वविद्यालयी स्तर की प्रवेश परीक्षाओं हेतु समान रूप से उपयोगी
- विगत वर्षों में पूछे गए प्रश्नों का समावेश

दृष्टि लर्निंग ऐप पर उपलब्ध प्रमुख कोर्सेज़

IAS Foundation Course

सामान्य अध्ययन

प्रिलिम्स + मेन्स

- 1200+ घंटों की 500+ कक्षाएँ
- सभी टॉपिक के लिये प्रिंटेड नोट्स
- 3 वर्षों के लिये अन्य विशेष सुविधाएँ

IAS Foundation Course

General Studies

Prelims + Mains

- 400+ Classes of 1000+ hrs.
- Printed Notes of All Segments
- Other special facilities for 3 years

IAS Prelims Course

सामान्य अध्ययन

केवल प्रिलिम्स

- 500+ घंटों की कक्षाएँ
- 'क्विक बुक सीरीज़' की 9 पुस्तकें
- 2 वर्षों के लिये अन्य विशेष सुविधाएँ

IAS + UPPCS + BPSC Optional Subject

हिंदी साहित्य

द्वारा- डॉ. विकास दिव्यकीर्ति

- 400+ घंटों की कक्षाएँ
- पाठ्यक्रम में शामिल सभी पाठ्य-पुस्तकें तथा प्रिंटेड नोट्स
- 145 दैनिक अभ्यास प्रश्न और 18 टेस्ट पेपर (मॉडल उत्तर सहित)

BPSC Prelims Course

बिहार PCS

- 500+ घंटों की कक्षाएँ
- 'BPSC सीरीज़' की 8 पुस्तकें
- 2 वर्षों के लिये अन्य विशेष सुविधाएँ

RAS/RTS Prelims Course

राजस्थान PCS

- 500+ घंटों की कक्षाएँ
- 'RAS सीरीज़' की 8 पुस्तकें
- 2 वर्षों के लिये अन्य विशेष सुविधाएँ

एथिक्स (पेपर-4)

द्वारा- डॉ. विकास दिव्यकीर्ति

- कुल 70 कक्षाएँ
- IAS के साथ-साथ UPPCS के लिये पूर्णत: सटीक
- मूल्यांकन की सुविधा के साथ 6 टेस्ट

निबंध

द्वारा- डॉ. विकास दिव्यकीर्ति

- कुल 13 कक्षाएँ
- IAS के साथ-साथ PCS के लिये पूर्णत: सटीक
- मूल्यांकन की सुविधा के साथ 20 टेस्ट

अतिरिक्त जानकारी के लिये 9311406442 नंबर पर कॉल या वाट्सएप करें

विज़िट करें www.drishtiIAS.com

अपने फोन पर इंस्टॉल करें **Drishti Learning App**

यू.जी.सी.-एन.टी.ए.
नेट/जेआरएफ
इतिहास

दृष्टि पब्लिकेशन्स

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष: 87501 87501, 011-47532596
Website: www.drishtiias.com
E-mail : booksteam@groupdrishti.com

शीर्षक : ***यू.जी.सी.-एन.टी.ए. नेट/जेआरएफ इतिहास***

लेखक : ***टीम दृष्टि***

प्रथम संस्करण : मई 2021

मूल्य : ₹ **480/-**

प्रकाशक

VDK Publications Pvt. Ltd.

(दृष्टि पब्लिकेशन्स)

641, प्रथम तल,

डॉ. मुखर्जी नगर,

दिल्ली-110009

विधिक घोषणाएँ

- इस पुस्तक में प्रकाशित सूचनाएँ, समाचार, ज्ञान एवं तथ्य पूरी तरह से सत्यापित किये गए हैं। फिर भी, यदि कोई जानकारी या तथ्य गलत प्रकाशित हो गया हो तो प्रकाशक, संपादक या मुद्रक उससे किसी व्यक्ति-विशेष या संस्था को पहुँची क्षति के लिये ज़िम्मेदार नहीं है।
- हम विश्वास करते हैं कि इस पुस्तक में छपी सामग्री लेखकों द्वारा मौलिक रूप से लिखी गई है। अगर कॉपीराइट उल्लंघन का कोई मामला सामने आता है तो प्रकाशक को ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जाएगा।
- सभी विवादों का निपटारा दिल्ली न्यायिक क्षेत्र में होगा।
- **© कॉपीराइट :** दृष्टि पब्लिकेशन्स (A Unit of VDK Publications Pvt. Ltd.), सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी अंश का प्रकाशन अथवा उपयोग, प्रतिलिपीकरण, ऐसे यंत्र में भंडारण जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो या स्थानान्तरण, किसी भी रूप में या किसी भी विधि से (इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटो-प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या किसी अन्य प्रकार से) प्रकाशक की पूर्वानुमति के बिना नहीं किया जा सकता।
- एम.पी. प्रिंटर्स, बी-220, फेज़-2, नोएडा (उत्तर प्रदेश) से मुद्रित।

दो शब्द...

प्रिय पाठको,

प्रसिद्ध इतिहासकार ई.एच. कार अपनी लोकप्रिय पुस्तक 'इतिहास क्या है' में कहते हैं, "इतिहास तब आरंभ होता है जब आदमी यह सोचना शुरू करता है कि 'समय' केवल प्राकृतिक प्रक्रिया नहीं है यानी केवल ऋतुओं का आवर्तन और मानव जीवन-चक्र ही इसमें सम्मिलित नहीं है, बल्कि यह विशिष्ट घटनाओं का एक क्रम है, जिसमें सचेत रूप से मनुष्य सक्रिय है और जिसे वह सचेत रूप से प्रभावित कर सकता है।" बर्कहार्ट के शब्दों में, "चेतना के जागरण के कारण प्रकृति से टूटकर अलग होना ही इतिहास है।" दरअसल, श्री कार यह कहना चाहते हैं कि मनुष्य न केवल अपने परिवेश को समझता है बल्कि उसमें सक्रियता से हस्तक्षेप भी करता है। इस पूरी प्रक्रिया में इतिहास उसे अतीत की वह दृष्टि प्रदान करता है जिससे वह सुंदर भविष्य की ओर आगे बढ़ सकने की बात सोचता है। और इसी प्रकार यह महान सूत्र श्री कार ने रचा कि इतिहास की अनंत शृंखला में अतीत, वर्तमान और भविष्य जुड़े हुए हैं। ज़ाहिर-सी बात है कि इतिहास की इस 'उपयोगिता' को बरकरार रखना आधुनिक समय की ज़रूरत है, खासकर इसलिये भी कि आधुनिक मनुष्य कहीं अधिक चेतनायुक्त होकर अपने परिवेश के प्रति सक्रिय है, अत: इतिहास के अकादमिक अध्ययन की भूमिका आज अत्यधिक है।

जबसे हमने दृष्टि पब्लिकेशन्स की शुरुआत की है, तभी से आप जैसे हज़ारों विद्यार्थियों के संदेश प्राप्त होते रहे हैं जो इतिहास विषय से अकादमिक क्षेत्र में आगे बढ़ना तो चाहते हैं किंतु इसके लिये आवश्यक अर्हता पूरी नहीं कर पाते, यानी उन्हें तमाम कोशिशों के बावजूद यू.जी.सी./एन.टी.ए. नेट परीक्षा में सफलता नहीं मिल पा रही है। आपने हमसे यह अपेक्षा व्यक्त की कि हम आपको एक ऐसी संपूर्ण पाठ्य-सामग्री उपलब्ध कराएँ जिससे आपकी यह चुनौती हल हो जाए। साथ ही हमारा अनुभव यह भी रहा है कि ऐसे विद्यार्थियों का ठीक-ठाक अनुपात रहता है जो प्रतियोगी परीक्षा के साथ-साथ अपनी अकादमिक पढ़ाई भी जारी रखना चाहते हैं। प्रस्तुत पुस्तक आपके इन्हीं उद्देश्यों को साधने के लिये तैयार की गई है। उल्लेखनीय है कि यह पुस्तक विभिन्न विश्वविद्यालयों से जुड़ी एम.ए./एम.फिल/पीएच.डी. की प्रवेश परीक्षाओं के लिये भी उपयोगी है।

आप सबने यू.जी.सी./एन.टी.ए. नेट के इतिहास का पाठ्यक्रम और पूछे जाने वाले प्रश्नों को देखा ही होगा। प्रस्तुत पुस्तक को हमने इसी अनुरूप तैयार किया है। पाठ्यक्रम के जिस हिस्से को जितनी तथ्यात्मकता और जितने विस्तार से तैयार करने की आवश्यकता थी पाठ्य-सामग्री भी उसी अनुरूप समायोजित है। लगभग 600 पृष्ठों की इस पुस्तक में संपूर्ण पाठ्यक्रम को उसकी महत्ता के अनुसार संयोजित किया गया है। हमारी कोशिश रही है कि सामग्री इतनी सहज हो कि इसे तैयार करने के लिये आपको अतिरिक्त ऊर्जा न लगानी पड़े। साथ ही बीते वर्षों में पूछे गए प्रश्नों को हल करने के लिये आपको किसी अन्य स्रोत पर निर्भर न रहना पड़े, इसलिये इसमें विगत वर्षों के प्रश्नों को भी शामिल किया गया है। कहने का भाव यह है कि यह पुस्तक आपकी संपूर्ण तैयारी कराएगी। इस पुस्तक को तैयार किये जाने की प्रक्रिया अत्यंत सघन व प्रामाणिक रही है। इस परीक्षा में सफल हुए लेखकों की एक पूरी टीम द्वारा इसे तैयार किया गया है। इस टीम ने महीनों तक रात-दिन मेहनत की है तब यह पुस्तक प्रकाशित हो सकी है। साथ ही टीम ने पुस्तक के एक-एक तथ्य को कई बार जाँचा है ताकि कोई तथ्यात्मक त्रुटि न रह जाए। उम्मीद है कि इस प्रक्रिया को जानकर आप इस पुस्तक की विश्वसनीयता के बारे में आश्वस्त हो सकेंगे।

इस पुस्तक को लेकर आपका अनुभव कैसा रहा, यह भी हमसे साझा करें। आपकी प्रतिक्रिया हमारे लिये बहुमूल्य है। **अपनी बात बेझिझक '8130392355' नंबर पर वाट्सएप मैसेज से भेज दें।** आपकी टिप्पणियों के आधार पर हम आगामी संस्करण को और बेहतर बना सकेंगे।

शुभकामनाओं सहित

प्रधान संपादक

दृष्टि पब्लिकेशन्स

अनुक्रम

1.	इकाई–1	1
2.	इकाई–2	79
3.	इकाई–3	141
4.	इकाई–4	209
5.	इकाई–5	295
6.	इकाई–6	327
7.	इकाई–7	363
8.	इकाई–8	407
9.	इकाई–9	475
10.	इकाई–10	533
	विविध संकल्पनाएँ, विचार और अवधियाँ/शब्दावलियाँ	561

इकाई I

- **स्रोतों संबंधी वार्त्ता : पुरातत्वीय स्रोत :** अन्वेषण, उत्खनन, पुरालेख विद्या तथा मुद्राशास्त्र की जानकारी। पुरातत्त्वीय स्थलों का काल निर्धारण। साहित्यिक स्रोत : स्वदेशी साहित्य (प्राथमिक एवं द्वितीयक), धार्मिक और धर्म निरपेक्ष साहित्य, मिथिक, दंत कथाओं आदि के काल निर्धारण की समस्याएँ। विदेशी विवरण : यूनानी, चीनी और अरबी विद्वान।
- **पशुचारण और खाद्य उत्पादन :** नवपाषाण और ताम्र पाषाण युग : अधिवासन, वितरण, औज़ार और विनिमय का ढाँचा।
- **सिंधु/हड़प्पा की सभ्यता :** उद्भव, विस्तार, सीमा, मुख्य स्थल, अधिवास का स्वरूप, शिल्प विशिष्टता, धर्म, समाज और राज्य शासन विधि, सिंधु घाटी सभ्यता का ह्रास, आंतरिक और बाहरी व्यापार, भारत में प्रथम शहरीकरण।
- **वैदिक तथा उत्तरकालीन वैदिक युग :** आर्यों से संबंधित विवाद, राजनीतिक तथा सामाजिक संस्थाएँ, राज्य संरचना और राज्य के सिद्धांत; वर्ण और सामाजिक स्तरीकरण का उद्भव, धार्मिक और दार्शनिक विचार। लौह प्रौद्योगिकी का प्रारम्भ, दक्षिण भारत के महापाषाण।
- **राज्य शासन व्यवस्था का विस्तार :** महाजनपद, राजतंत्रीय और गणतंत्रीय राज्य, आर्थिक और सामाजिक विकास और छठी शताब्दी ई.पू. में द्वितीय शहरीकरण का उद्भव; अशास्त्रीय पंथ – जैन धर्म, बौद्ध धर्म और आजीवक सम्प्रदायों का उद्भव।

1.1 प्राचीन भारतीय इतिहास के स्रोत
(The Sources of Ancient Indian History)

मानव-अतीत को संजोए रखने का एकमात्र स्रोत इतिहास ही है। प्राचीन भारत का इतिहास मानव सभ्यता के उस काल की जानकारी देता है, जब मानव अपने विकास की आरंभिक अवस्था में था। वर्तमान मानव का स्वरूप क्रमिक विकास का परिणाम है। 'राजतरंगिणी' में लेखक 'कल्हण' ने इतिहास की व्याख्या इस प्रकार की है–

श्लाध्यः स एव गुणवान् रागद्वेषबहिष्कृता।
भूतार्थकथने यस्य स्थेयस्येव सरस्वती।।

अर्थात् "प्राचीन वृत्तांतों (इतिहास) के निरूपण में वही (इतिहासकार) प्रशंसनीय और निष्पक्ष माना जा सकता है, जिसकी दृष्टि न्यायाधीश की भाँति राग एवं द्वेष से मुक्त हो।"

प्राचीन भारतीय इतिहास को तीन भागों में विभाजित किया जाता है– प्रागैतिहासिक काल, आद्य ऐतिहासिक काल तथा ऐतिहासिक काल। प्रागैतिहासिक काल का कोई लिखित साक्ष्य नहीं, वरन् केवल पुरातात्त्विक साक्ष्य उपलब्ध हैं। आद्य इतिहास उस काल को कहा जाता है जिसका लिखित साक्ष्य तो है किंतु उसे पढ़ा नहीं जा सकता, जैसे- हड़प्पा सभ्यता एवं वैदिक संस्कृति। ऐतिहासिक काल उस काल को कहा जाता है जिसके पुरातात्त्विक एवं साहित्यिक दोनों साक्ष्य उपलब्ध हैं। इस प्रकार प्राचीन भारत के इतिहास के प्रमुख स्रोत हैं– पुरातात्त्विक स्रोत, साहित्यिक स्रोत एवं विदेशी यात्रियों के विवरण।

पुरातात्त्विक स्रोत

पुरातात्त्विक स्रोतों से प्राचीन इतिहास की प्रामाणिक जानकारी मिलती है। इनके अंतर्गत अभिलेख, स्मारक-भवन, सिक्के, मूर्तियाँ, चित्रकला, मुहरें आदि अवशेष आते हैं।

सर मार्टिमर व्हीलर के अनुसार, "पुरातत्त्ववेत्ता केवल वस्तुओं को ही नहीं खोदता अपितु वह मनुष्यों को भी खोदता है। वह तथ्यों का अन्वेषक होता है।"

गार्डन चाइल्डः "भौतिक अवशेषों के माध्यम से मानव के क्रियाकलापों का ज्ञान ही पुरातत्त्व है।"

बी.बी. लालः "पुरातत्त्व विज्ञान की वह शाखा है जो अतीत की मानव संस्कृतियों को व्याख्यायित करती है।"

पुरातात्त्विक सामग्री प्राप्त करने के लिये पुरातात्त्विक स्थलों का अन्वेषण यानी खोज सर्वप्रथम करनी पड़ती है। इसके पश्चात् उस स्थल का उत्खनन यानी खुदाई करने से जो वस्तुएँ प्राप्त होती हैं उनका अध्ययन करने से प्राचीन संस्कृति के बारे में पता चलता है।

अन्वेषण (खोज)

सर्वप्रथम पुरातात्त्विक स्थलों की पहचान यानी खोज (Exploration) की जाती है। जब किसी स्थल की ऊपरी सतह से ही थोड़ी खुदाई पर ऐसी वस्तुएँ मिलने लगती हैं जो वर्तमान में प्रयुक्त नहीं होतीं, तब उस स्थल की पहचान एक पुरातात्त्विक स्थल के रूप में की जाती है। इसके पश्चात् पुरातात्त्विक स्थल की गहरी खुदाई करके प्राचीन संस्कृतियों को उद्घाटित किया जाता है। यथा- हड़प्पा से प्राप्त प्राचीन ईंटों के आधार पर उसके पुरातात्त्विक स्थल होने की पहचान की गई थी।

उत्खनन (खुदाई)

एक बार पुरातात्त्विक स्थल की खोज कर लेने के पश्चात् उसकी खुदाई यानी उत्खनन (Excavation) की प्रक्रिया आरंभ की जाती है। उत्खनन दो प्रकार का होता है– लंबवत (Vertical) और क्षैतिज (Horizontal)।

लंबवत उत्खनन द्वारा किसी पुरातात्त्विक स्थल की विभिन्न प्राचीन संस्कृतियों के बारे में पता चलता है। सबसे ऊपरी सतह से प्राप्त अवशेष सबसे नवीन संस्कृति के बारे में बताते हैं तथा सबसे निचली सतह से प्राप्त अवशेष उस स्थल की सबसे प्राचीन संस्कृति के द्योतक होते हैं। खुदाई की यह विधि स्तरीकरण (Stratification) भी कहलाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लंबवत उत्खनन से विभिन्न संस्कृतियों का कालक्रम ज्ञात होता है।

क्षैतिज उत्खनन द्वारा किसी निश्चित स्तर पर विस्तार से खुदाई करके एक निश्चित संस्कृति के बारे में विस्तृत जानकारी हासिल की जाती है। यानी जब किसी संस्कृति का व्यापक अध्ययन करना हो तो उसके लिये क्षैतिज उत्खनन की विधि प्रयुक्त होती है। हड़प्पा सभ्यता के कई नगरों का क्षैतिज उत्खनन किया गया है और वहाँ से प्राप्त अवशेषों के आधार पर हड़प्पा की नगरीय संरचना और उसकी सभ्यता एवं संस्कृति की व्याख्या सफलतापूर्वक की गई है।

अभिलेख

- प्राचीन भारत के अधिकांश अभिलेख शिलाओं, स्तंभों, ताम्रपत्रों, दीवारों तथा प्रतिमाओं पर उत्कीर्ण हैं।
- सबसे प्राचीन अभिलेखों में मध्य एशिया के बोगजकोई से प्राप्त अभिलेख प्रमुख हैं। इन पर वैदिक देवता– इंद्र, मित्र, वरुण और नासत्य के नाम मिलते हैं। इनसे ऋग्वेद की तिथि ज्ञात करने में मदद मिलती है।
- भारत में सबसे प्राचीन अभिलेख अशोक के हैं जो लगभग 300 ई.पू. के हैं। डी.आर. भंडारकर ने केवल अभिलेखों के आधार पर ही अशोक का इतिहास लिखने का सफल प्रयास किया है।
- अशोक के अभिलेख ब्राह्मी, खरोष्ठी, यूनानी तथा अरमाइक लिपियों में मिले हैं।

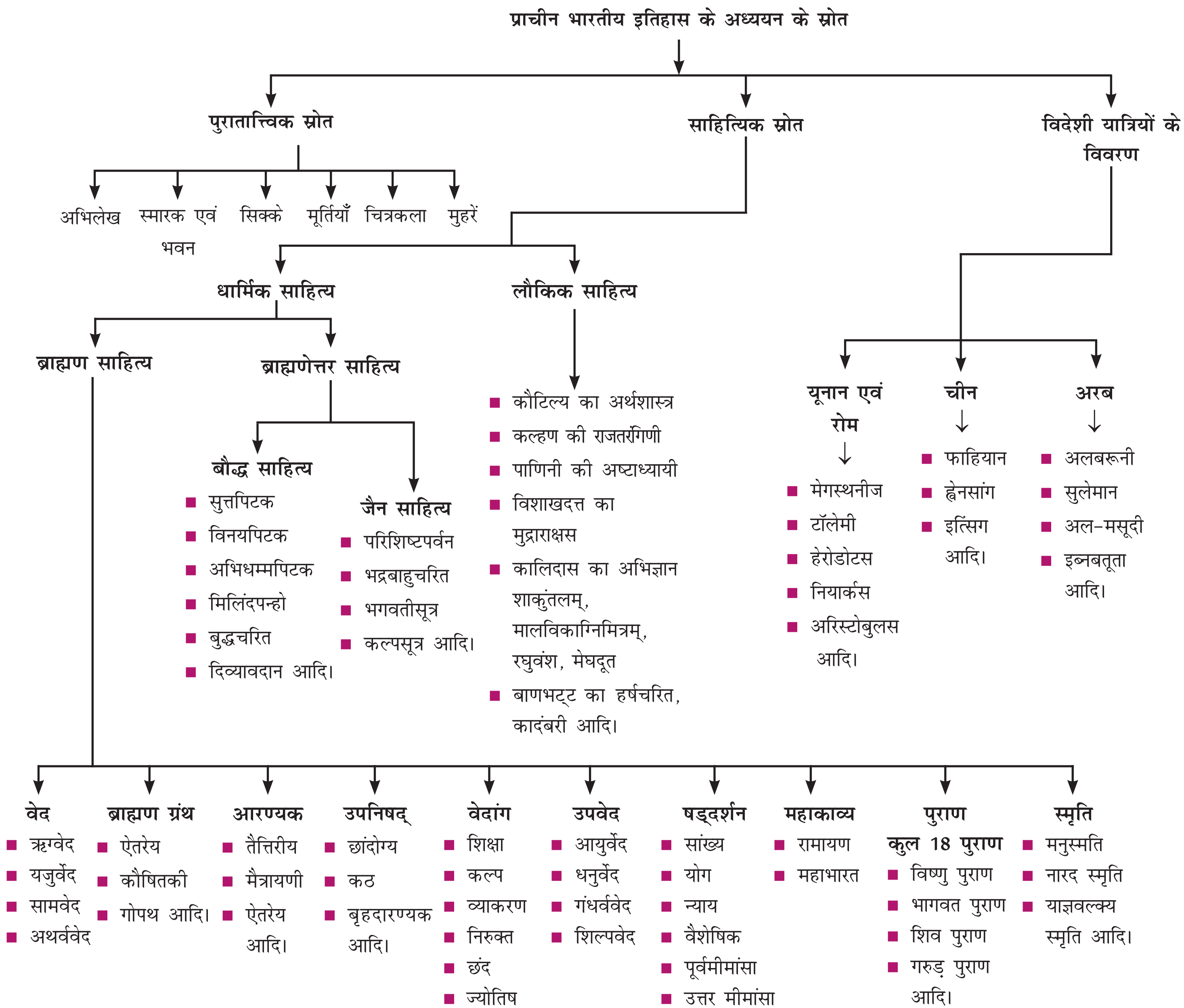
प्राचीन भारतीय इतिहास के अध्ययन के स्रोत
पुरातात्त्विक स्रोत
साहित्यिक स्रोत
विदेशी यात्रियों के विवरण
अभिलेख
स्मारक एवं भवन
सिक्के
मूर्तियाँ
चित्रकला
मुहरें
धार्मिक साहित्य
लौकिक साहित्य
ब्राह्मण साहित्य
ब्राह्मणेत्तर साहित्य
बौद्ध साहित्य
सुत्तपिटक
विनयपिटक
अभिधम्मपिटक
मिलिंदपन्हो
बुद्धचरित
दिव्यावदान आदि।
जैन साहित्य
परिशिष्टपर्वन
भद्रबाहुचरित
भगवतीसूत्र
कल्पसूत्र आदि।
कौटिल्य का अर्थशास्त्र
कल्हण की राजतरंगिणी
पाणिनी की अष्टाध्यायी
विशाखदत्त का मुद्राराक्षस
कालिदास का अभिज्ञान शाकुंतलम्, मालविकाग्निमित्रम्, रघुवंश, मेघदूत
बाणभट्ट का हर्षचरित, कादंबरी आदि।
यूनान एवं रोम
मेगस्थनीज
टॉलेमी
हेरोडोटस
नियार्कस
अरिस्टोबुलस आदि।
चीन
फाहियान
ह्वेनसांग
इत्सिंग आदि।
अरब
अलबरूनी
सुलेमान
अल-मसूदी
इब्नबतूता आदि।
वेद
ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद
ब्राह्मण ग्रंथ
ऐतरेय
कौषितकी
गोपथ आदि।
आरण्यक
तैत्तिरीय
मैत्रायणी
ऐतरेय आदि।
उपनिषद्
छांदोग्य
कठ
बृहदारण्यक आदि।
वेदांग
शिक्षा
कल्प
व्याकरण
निरुक्त
छंद
ज्योतिष
उपवेद
आयुर्वेद
धनुर्वेद
गंधर्ववेद
शिल्पवेद
षड्दर्शन
सांख्य
योग
न्याय
वैशेषिक
पूर्वमीमांसा
उत्तर मीमांसा
महाकाव्य
रामायण
महाभारत
पुराण
कुल 18 पुराण
विष्णु पुराण
भागवत पुराण
शिव पुराण
गरुड़ पुराण आदि।
स्मृति
मनुस्मति
नारद स्मृति
याज्ञवल्क्य स्मृति आदि।

1.2 प्रागैतिहासिक काल एवं आद्य इतिहास (Pre-Historic Period and Proto-History)

मानव का उद्भव

पृथ्वी 4 अरब 60 करोड़ वर्षों से अधिक पुरानी है। पृथ्वी पर जीवों की उत्पत्ति 3 अरब 50 करोड़ वर्ष पूर्व मानी जाती है। मानव धरती पर पूर्व-प्लाइस्टोसीन युग और प्लाइस्टोसीन (अतिनूतन) युग के आरंभ में उत्पन्न हुआ था। लगभग 60 लाख वर्ष पूर्व मानवसम (होमिनिड) का दक्षिणी और पूर्वी अफ्रीका में आविर्भाव हुआ।

मानव के उद्भव में 'ऑस्ट्रेलोपिथेकस' (Australopithecus) का तात्पर्य 'दक्षिणी वानर' से है। जो मानव का आदि पूर्वज माना जाता है, जिसे 'प्रोटो-मानव' अथवा 'आद्य मानव' भी कहा जाता है। पृथ्वी पर सीधा चलने वाला मानव 'होमो-इरेक्टस' को माना जाता है। भारत में प्राप्त जीवाश्म में 'रामापिथेकस' और 'शिवापिथेकस' हैं। नर्मदा घाटी के 'हथनौरा' से 'होमिनिड' की खोपड़ी प्राप्त हुई, जिसे 'होमो इरेक्टस' के अंतर्गत रखा गया। लेकिन इसके शारीरिक परीक्षण के बाद अब इसे 'आद्य होमो सेपीयन्स' माना जाता है। आरंभिक 'होलोसीन (अद्यतन) युग' तक आते-आते 'शिकारी' एवं 'खाद्य संग्राहक' 'होमो सेपीयन्स सेपीयन्स' (आधुनिक मानव) का प्रादुर्भाव दक्षिणी अफ्रीका में हुआ।

मानव विकास की विभिन्न अवस्थाएँ

मानव के विकास की अवस्थाओं को निम्नलिखित भागों में बाँटा गया है–

- **रामापिथेकस:** यह केवल निचले और ऊपरी जबड़ों से पहचाना जाता है। जबड़ों से ऐसी चौड़ाई का संकेत मिलता है जो थूथनदार कपि में नहीं पाई जाती है।
- **ऑस्ट्रेलोपिथेकस अफ्रीकेनस:** यह एक हल्का और सुकुमार जीव था। ऑस्ट्रेलोपिथेकस सीधा चलता था और उसकी पीठ मुड़ी रहती थी ताकि शरीर अपने संतुलन के लिये कमर पर झुका रहे। उसके पैर छोटे थे और खोपड़ी तो मनुष्य से काफी मिलती-जुलती थी, परंतु उसका चेहरा कपि की तरह थूथनदार था।
- **होमो इरेक्टस:** इसे मूलत: पिथेकेंथ्रोपस (Pithecanthropus) की संज्ञा दी जाती थी, जिसका तात्पर्य- सीधा चलने वाला कपि-मानव है। इसकी खोपड़ी पिछले प्रारूप की तुलना में अधिक गोलाकार थी, हालाँकि इसका माथा ढलवाँ तथा भ्रू-अस्थि सुदृढ़ थी और सीधा खड़ा होने पर इसकी ऊँचाई 5 फुट थी।
- **नियंडरथल:** यह आधुनिक मानव का पूर्वज था। इसकी गर्दन छोटी, चेहरा चौड़ा, भ्रू-अस्थि उभरी और आँखों के कोटर काफी बड़े थे। यह गर्दन झुकाकर सीधा चलता था और अपने पूर्ववर्ती जितना ऊँचा था।
- **होमो सेपियन्स:** यह पहला मानव प्रारूप था, जिसमें एक उभरी हुई ठोड़ी का विकास और खोपड़ी में एक गोलाकार या उत्तल अग्र भाग का निर्माण। इससे तीन मानव प्रजातियों के आविर्भाव का पूर्व संकेत मिलता है। ये प्रजातियाँ हैं– काकेशसी, मंगोलॉयड और नीग्रॉयड।

प्रागैतिहासिक काल

प्रागैतिहासिक काल के आरंभ में जब मानव पत्थरों के उपकरणों के निर्माता के रूप में अपने 'पुरुषाभ वानर' (ऐंथ्रोपॉएड एप) पूर्वजों से पृथक्, प्रारंभिक तकनीकी विकास से संबंधित हुआ, तो उस काल को 'पाषाण काल' कहा जाता है।

भारत में प्रागैतिहासिक अनुसंधान की उस समय शुरुआत हुई जब भारतीय भूतत्त्व सर्वेक्षण के 'रॉबर्ट ब्रूसफुट' ने वर्तमान तमिलनाडु प्रदेश के चेन्नई (मद्रास) नगर के पास स्थित 'पल्लवरम' नामक पुरास्थल से 13 मई, 1863 को लैटराइट के जमाव से एक 'क्लीवर' खोज निकाला था। विलियम किंग ने 28 सितंबर, 1864 को 'अत्तिरम्पक्कम' नाले से दो सुंदर कुल्हाड़ियाँ (हैंड-एक्स) खोजी थीं।

पाषाण काल को सामान्यत: तीन प्रमुख उपकालों में विभाजित किया जाता है– पुरापाषाण काल, मध्यपाषाण काल एवं नवपाषाण काल।

पुरापाषाण काल

पुरापाषाण युग का मानव आखेटक तथा खाद्य संग्राहक था। पुरापाषाण कालीन संस्कृति के अवशेष-सोहन नदी घाटी, बेलन नदी घाटी, नर्मदा नदी घाटी एवं भोपाल के पास 'भीमबेटका' नामक शैलाश्रयों इत्यादि में मिलते हैं।

- पुरापाषाण काल को उपकरणों में भिन्नता के कारण तीन कालों में विभाजित किया जाता है–

निम्न-पुरापाषाण काल

- इसके अंतर्गत 5,00,000 से 50,000 ई.पू. का समय आता है।
- निम्न पुरापाषाण काल की संस्कृति को उपकरण के आधार पर दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है- चॉपर चॉपिंग पेबल संस्कृति तथा हैंड एक्स संस्कृति।
- चॉपर-चॉपिंग पेबल संस्कृति: पाकिस्तान के पंजाब में प्रवाहित होने वाली सिंधु की सहायक 'सोहन नदी' की घाटी में प्राप्त होने के कारण इसे 'सोहन संस्कृति' भी कहा जाता है।
- सोहन घाटी के उपकरणों को आरंभिक सोहन, उत्तरकालीन सोहन, चौंतरा तथा विकसित सोहन नाम दिया गया है। उत्तरकालीन सोहन उपकरण मध्य पूर्वपाषाणिक हैं।
- पेबल एवं चॉपर: पेबल पत्थर के वे उपकरण हैं जो पानी के बहाव में रगड़ खाकर चिकने और सपाट हो गए। पेबल के दोनों किनारों को छीलकर उनमें धार बनाई जाती थी और इस प्रकार तैयार बड़े आकार वाले उपकरण को चॉपर कहा जाता था। इसे द्विधारी उपकरण भी कहा जाता है।

1.3 हड़प्पा सभ्यता/सिंधु घाटी सभ्यता
(Indus Valley Civilization)

सिंधु एवं उसकी सहायक नदियों के उपजाऊ मैदान में कांस्य काल की प्राचीन सभ्यता का उद्‌भव हुआ, जिसे सिंधु घाटी सभ्यता कहा जाता है। हड़प्पा नामक पुरास्थल से सर्वप्रथम ज्ञात होने के कारण इसे 'हड़प्पा सभ्यता' के नाम से भी जाना जाता है। सिंधु तक सीमित न होकर एक व्यापक भौगोलिक क्षेत्र में फैले होने के कारण इसे 'हड़प्पा सभ्यता' कहना अधिक तर्कसंगत भी लगता है।

हड़प्पा सभ्यता की उत्पत्ति

- सिंधु घाटी सभ्यता बीसवीं सदी के द्वितीय दशक तक एक गुमनाम सभ्यता थी।
- सर्वप्रथम चार्ल्स मसोन (Charles Masson) ने सन् 1826 ई. में हड़प्पा स्थित विशाल टीले का अन्वेषण किया। उसने वहाँ बहुत पुरानी बस्ती के बुर्जों और अद्‌भुत ऊँची-ऊँची दीवारों को देखा। उसने यह समझा कि यह शहर सिकन्दर महान के समय का है।
- 1856 में कराची से लाहौर तक रेलवे लाइन बिछाते समय जॉन विलियम ब्रंटन को ईंटों के टुकड़ों के साथ प्राचीन वस्तुएँ प्राप्त हुईं, जिन्हें भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण के जनरल अलेक्जेंडर कनिंघम के पास भेजा गया किंतु वह इस सभ्यता के महत्त्व को नहीं पहचान सके।
- सन् 1872 ई. में प्रसिद्ध पुरातत्त्वेत्ता सर अलेक्जेंडर कनिंघम इस स्थान पर आया। कनिंघम ने इस स्थान से कुछ पुरातात्त्विक वस्तुएँ इकट्ठी कीं, लेकिन वह इन वस्तुओं का काल निर्धारण न कर सका। उसने सामान्य तौर पर यह माना कि ये वस्तुएँ संभवत: भारत से बाहर की हैं। इसलिये उसने गाँव के लोगों के इस मत से सहमति प्रकट की कि यह शहर लगभग 1000 वर्ष पुराना है।
- 1912 ई. में जे.एफ. फ्लीट ने यहाँ से प्राप्त की गई सामग्रियों पर रायल एशियाटिक सोसायटी द्वारा प्रकाशित पत्रिका में एक लेख प्रस्तुत किया। परंतु वह भी सही-सही मूल्यांकन करने में असमर्थ रहे।
- 1921 ई. में भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण के महानिदेशक सर जॉन मार्शल के नेतृत्व में पुरातत्त्वविद् 'दयाराम साहनी' ने पंजाब (पाकिस्तान) के शाहीवाल ज़िले में 'रावी नदी के बाएँ तट पर स्थित हड़प्पा के टीले' का पता लगाया।
- 1922 ई. में सर जॉन मार्शल के निर्देशन में 'राखालदास बनर्जी' ने सिंधु प्रांत के लरकाना ज़िले में सिंधु नदी के दाहिने तट पर स्थित मोहनजोदड़ो के टीले को खोज निकाला।
- फिर भी, 1924 ई. में मार्शल ने हड़प्पा के विषय में रिपोर्ट दी और यह बताया कि यह सभ्यता लगभग उतनी ही प्राचीन थी जितनी मिस्र और मेसोपोटामिया की सभ्यता यानी लगभग **5000** वर्ष पुरानी।
- मार्शल द्वारा प्रतिपादित हड़प्पा के काल क्रम को रेडियो कार्बन डेटिंग जैसे काल निर्धारण के तरीकों से और भी समर्थन मिला है। रेडियो कार्बन -14 (C^{14}) जैसी नवीन विश्लेषण पद्धति के द्वारा हड़प्पा सभ्यता का काल निर्धारण 2500-1750 ई.पू. माना गया। यह सभ्यता 400-500 वर्षों तक विद्यमान रही और 2200-2000 ई.पू. के मध्य तक यह अपनी परिपक्व अवस्था में थी। कुछ नवीनतम शोधों के अनुसार इस सभ्यता का काल लगभग 8,000 साल पुराना माना जाता है।
- कुछ पुराविदों का विचार है कि सैंधव सभ्यता की उत्पत्ति पूर्व विकसित होने वाली ताम्र-पाषाणिक संस्कृतियाँ जैसे- कुल्ली, क्वेटा, सोथी, नाल एवं आमरी से हुई है।

कालानुक्रम

हड़प्पा की सभ्यता (जिसे सिन्धु नदी घाटी सभ्यता और परिपक्व हड़प्पा भी कहा जाता है) से अर्ध यायावर और कृषक समुदायों के एक लम्बे समय से चले आ रहे विकास के चरमोत्कर्ष का पता चलता है। प्रौद्योगिकीय और वैचारिक एकीकरण की प्रक्रियाओं की पृष्ठभूमि में हड़प्पा की सभ्यता का अभ्युदय हुआ। इसलिये विद्वानों ने हड़प्पा पूर्व और हड़प्पा की संस्कृतियों के लिये निम्नलिखित कालक्रम माना है–

1. **5500 ई.पू. से 3500 ई.पू. तक नवपाषाण युग:** पीडमांट (पर्वतपाद) क्षेत्र में मेहरगढ़ से प्रारंभ होकर अन्य जगहों पर भी कृषि और कृषक समुदायों का प्रसार हुआ।

- 5000 ई.पू. तक बलूचिस्तान में अनेक छोटे-बड़े खेतिहर गाँव बस चुके थे। क्वेटा की घाटी में कीली-गुल-मुहम्मद और कलात तथा अफगानिस्तान में कंधार के पास मुंडीगक जैसे गाँव अस्तित्व में आ चुके थे। तक्षशिला के पास सरायखोला और बन्नू के दक्षिण में शेरी खान तरकई जैसी बस्तियाँ भी इसी काल की हैं।

4000 ई.पू. तक मकरान तट पर स्थित (कराची के पास) बालाकोट की बस्ती भी अस्तित्व में आ चुकी थी। संभवतया यह समुद्री सीपियों का स्रोत रही हो।

- 4000 ई.पू. के आसपास मेहरगढ़ फैलकर कोई 50 हेक्टेयर की बस्ती बन चुका था। मकानों और अन्नभंडारों के निर्माण की परंपरा तो जारी रही परंतु साथ में मेहरगढ़ के लोग अब बड़े पैमाने पर तांबे का उपयोग करने लगे थे।
- बड़ी संख्या में मिट्टी की बनी स्त्रियों की मूर्तियाँ और चाक के आविष्कार के बाद बड़े पैमाने पर मिट्टी के बर्तनों के उत्पादन के साक्ष्य मिले हैं। इन बर्तनों पर की गई चित्रकारी को बलूचिस्तान के खेतिहर समुदायों के मृद्‌भांडों की विशेष पहचान माना जाता है।
- 4000 ई.पू. के उत्तरार्द्ध में पीडमांट अंचल में विकसित कृषि व्यवस्था सिन्ध की घाटी में सफलता के साथ शुरू की गई। आमरी सभ्यता

1.4 वैदिक सभ्यता
(Vedic Civilization)

सैंधव सभ्यता के पश्चात् भारत में जिस सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ, उसे वैदिक अथवा आर्य सभ्यता के नाम से जाना जाता है। आर्य सभ्यता का ज्ञान वेदों से होता है, जिसमें ऋग्वेद सर्वप्राचीन होने के कारण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। सामान्यत: ऐसा माना गया है कि आर्यों ने ही सैंधव सभ्यता के नगरों को ध्वस्त कर एक नई सभ्यता की नींव रखी थी, लेकिन अभी भी इसके कोई ठोस साक्ष्य न होने के कारण इसे कल्पना ही माना जाता है।

वैदिक सभ्यता भारत की प्राचीन सभ्यता है जिसमें वेदों की रचना हुई। वैदिक शब्द 'वेद' से बना है, जिसका अर्थ होता है- 'ज्ञान'। वैदिक संस्कृति के निर्माता **आर्य** थे। वैदिक संस्कृति में आर्य शब्द का अर्थ- श्रेष्ठ है। सर्वप्रथम मैक्समूलर ने 1853 ई. में आर्य शब्द का प्रयोग एक श्रेष्ठ जाति के आशय से किया था। आर्यों की भाषा संस्कृत थी।

अध्ययन की सुविधा से वैदिक संस्कृति को दो भागों में बाँटा गया है- ऋग्वैदिक काल एवं उत्तर वैदिक काल।

ऋग्वैदिक काल (1500–1000 ई.पू.)

- इस काल का तिथि निर्धारण जितना विवादास्पद रहा है, उतना ही इस काल के लोगों के बारे में सटीक जानकारी प्राप्त करना। 'ऋग्वेद संहिता' की रचना इस काल में हुई थी। अत: यह इस काल की जानकारी का एकमात्र साहित्यिक स्रोत है।
- भारत में आर्यों के आगमन का यथेष्ट पुरातात्त्विक प्रमाण नहीं मिलता। उनके द्वारा प्रयुक्त छेद वाली कुल्हाड़ियाँ, कांसे की कटारें आदि पश्चिमोत्तर में प्राप्त हुए हैं।
- सिंधु सभ्यता के विपरीत वैदिक सभ्यता मूलत: ग्रामीण थी। आर्यों का आरंभिक जीवन पशुचारण पर आधारित था। कृषि उनके लिये गौण कार्य था।
- 1400 ई. पू. के बोगज़कोई (एशिया माइनर) के अभिलेख में ऋग्वैदिक काल के देवताओं- इंद्र, मित्र, वरुण तथा नासत्य का उल्लेख मिलता है। इससे अनुमान लगाया जाता है कि वैदिक आर्य ईरान से होकर भारत में आए होंगे।
- ऋग्वेद की अनेक बातें ईरानी भाषा के प्राचीनतम ग्रंथ अवेस्ता से मिलती हैं।

नोट: संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) द्वारा 'ऋग्वेद' को विश्व मानव धरोहर के साहित्य में शामिल किया गया है।

- आर्यों के मूल निवास के संदर्भ में विभिन्न विद्वानों के विचार अलग-अलग हैं।

आर्यों के मूल निवास के बारे में विद्वानों के मत

विद्वान	आर्यों का मूल निवास स्थल
प्रो. मैक्समूलर	मध्य एशिया (बैक्ट्रिया)
बाल गंगाधर तिलक	उत्तरी ध्रुव
डॉ. अविनाश चंद्र दास	सप्त सैंधव प्रदेश
दयानंद सरस्वती	तिब्बत
नेहरिंग एवं प्रो. गार्डन चाइल्ड	दक्षिणी रूस
गंगानाथ झा	ब्रह्मर्षि देश
गाइल्स महोदय	हंगरी अथवा डेन्यूब नदी घाटी
प्रो. पेंका	जर्मनी के मैदानी भाग

नोट: अधिकांश विद्वान प्रो. मैक्समूलर के विचारों से सहमत हैं कि आर्य मूल रूप से मध्य एशिया के निवासी थे।

भौगोलिक विस्तार

- आर्यों के आरंभिक इतिहास की जानकारी का मुख्य स्रोत ऋग्वेद है।
- ऋग्वेद में आर्य-निवास स्थल के लिये सप्त सैंधव क्षेत्र का उल्लेख मिलता है, जिसका अर्थ है- सात नदियों का क्षेत्र। ये नदियाँ हैं- सिंधु, सरस्वती, शतुद्रि (सतलज), विपासा (व्यास), परुष्णी (रावी), वितस्ता (झेलम) और अस्किनी (चिनाब)।
- ऋग्वेद से प्राप्त जानकारी के अनुसार, आर्यों का विस्तार अफगानिस्तान, पंजाब तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश तक था। सतलज से यमुना तक का क्षेत्र 'ब्रह्मवर्त्त' कहलाता था। मनुस्मृति में सरस्वती और दृषद्वती नदियों के बीच के प्रदेश को 'ब्रह्मवर्त' पुकारा गया है। इसे ऋग्वैदिक सभ्यता का केंद्र माना जाता है।
- गंगा व यमुना के दोआब क्षेत्र एवं उसके सीमावर्ती क्षेत्रों पर भी आर्यों ने कब्ज़ा कर लिया, जिसे 'ब्रह्मर्षि देश' कहा गया। कालांतर में संपूर्ण उत्तर भारत में आर्यों ने विस्तार कर लिया जिसे 'आर्यावर्त' कहा जाता है।
- वैदिक संहिताओं में वर्णित कुल 31 नदियों में से ऋग्वेद में 25 नदियों का उल्लेख किया गया है। किंतु, ध्यान देने योग्य है कि ऋग्वेद के नदी सूक्त में केवल 21 नदियों का वर्णन किया गया है। इस काल की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नदी सिंधु को बताया गया है, जबकि सर्वाधिक पवित्र नदी सरस्वती को माना गया है, जिसे 'देवीतमा', 'मातेतमा' एवं 'नदीतमा' भी कहा गया है। ऋग्वेद में गंगा नदी का एक बार, जबकि यमुना नदी का तीन बार उल्लेख हुआ है।

1.5 महाजनपद
(Mahajanapadas)

लौह तकनीक के विकास ने भौतिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन उत्पन्न कर दिया, जिससे उत्तरी भारत में 'द्वितीय नगरीकरण' का आगमन हुआ। कृषि, उद्योग, व्यापार-वाणिज्य आदि के विकास से प्राचीन जनजातीय व्यवस्था जर्जर हो गई थी तथा छोटे-छोटे जनों का स्थान जनपदों ने ग्रहण कर लिया था। ईसा-पूर्व छठी शताब्दी तक आते-आते जनपद, महाजनपदों के रूप में विकसित हो गए थे। इस काल में मध्य गंगा घाटी (पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बिहार) में लोहे का व्यापक रूप से प्रयोग किया जाने लगा था।

साहित्यिक स्रोत

- प्राचीनतम बौद्ध ग्रंथ, कुछ जैन पुस्तकें तथा व्याकरण ग्रंथ अष्टाध्यायी (जिसके रचियता पाणिनी थे) इस समय के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक जीवन की मूल्यवान झलक प्रस्तुत करते हैं।
- महत्त्वपूर्ण बौद्ध धर्म ग्रंथ हैं- विनयपिटक, दीघनिकाय, मज्झिमनिकाय, अंगुत्तरनिकाय, संयुक्तनिकाय तथा सुत्तनिपात।
- कुछ बाद के काल के बौद्ध और ब्राह्मणिक ग्रंथों से भी इस काल के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी हासिल होती है, जैसे- दिव्यावदान और आपस्तम्ब धर्मसूत्र जैसी पुस्तकें हमें उस समय के नगरों के विषय में जानकारी उपलब्ध कराती हैं। जातक कथाएँ, जो कि सुत्तपिटक का अंग हैं और जिनका रचनाकाल ईसा पूर्व 200 से 200 ई. के मध्य है, भी इस समय के समाज के बारे में जानकारी उपलब्ध कराती हैं।

पुरातात्त्विक स्रोत:

- साहित्यिक साक्ष्यों की तुलना तथा संपुष्टि के लिये प्रमुख पुरातात्त्विक स्रोत हैं- उत्तरी काली पॉलिश किये गए मृद्भांड, भवनों, शहरों एवं कस्बों के अवशेष, गोलाकार कुएँ (ring-wells) तथा धातु के सिक्के इत्यादि।
- पालि साहित्य एवं प्राकृत साहित्य में समकालीन स्थिति का विशद् वर्णन मिलता है। बौद्ध ग्रंथ 'अंगुत्तरनिकाय' में भारत के 16 महाजनपदों (15 उत्तर भारत के तथा 1 दक्षिण भारत का) का उल्लेख है। जबकि जैन ग्रंथ 'भगवती सूत्र' में भी ऐसे ही 16 महाजनपदों की सूची मिलती है। लगभग 450 ई.पू. पाणिनि ने 40 जनपदों का उल्लेख किया है। ये उत्तर भारत, अफगानिस्तान तथा मध्य एशिया में स्थित थे।
- एक अन्य बौद्ध ग्रंथ महावस्तु में भी 16 महाजनपदों की एक ऐसी ही सूची मिलती है। लेकिन इसमें गांधार तथा कंबोज का नाम नहीं है। इनके स्थान पर पंजाब में सिबा तथा मध्य भारत में दर्शन के नाम जुड़े हुए हैं।
- इसी प्रकार जैन ग्रंथ भगवती सूत्र भी 16 महाजनपदों की भिन्न सूची का उल्लेख करता है जिसमें अंग तथा मलय शामिल हैं।

महाजनपद	राजधानी
काशी	वाराणसी
कोशल	श्रावस्ती/अयोध्या (फैजाबाद मंडल)
अंग	चंपा (भागलपुर एवं मुंगेर)
मगध	राजगृह या गिरिव्रज तथा कालांतर में पाटलिपुत्र
वज्जि गणराज्य	वैशाली (उत्तरी बिहार)
मल्ल गणराज्य	कुशीनारा/पावा (पूर्वी उत्तर प्रदेश)
चेदि या चेति	सोत्थिवती/शुक्तिमती (आधुनिक बुंदेलखंड)
वत्स	कौशांबी (इलाहाबाद एवं बांदा)
कुरु	इंद्रप्रस्थ [दिल्ली, मेरठ एवं थानेश्वर (दक्षिण-पूर्व हरियाणा)]
पांचाल	उत्तरी पांचाल-अहिच्छत्र (रामनगर-बरेली) एवं दक्षिणी पांचाल-काम्पिल्य (फर्रुखाबाद)
मत्स्य (मच्छ)	विराट नगर, [जयपुर, अलवर एवं भरतपुर (राजस्थान)]
शूरसेन	मथुरा (आधुनिक ब्रजमंडल)
अश्मक (अस्मक या अश्वक)	पोतन या पोटिल (गोदावरी नदी के तट पर आंध्र प्रदेश)
अवंति	उत्तरी अवंति-उज्जयिनी, दक्षिणी अवंति-महिष्मती
गांधार	तक्षशिला [पेशावर एवं रावलपिंडी (पाकिस्तान)]
कंबोज	राजपुर अथवा हाटक [दक्षिण-पश्चिम कश्मीर तथा काफिरिस्तान (प्राचीन कपिशा)]

अंगुत्तरनिकाय में वर्णित 16 महाजनपद

काशी

- काशी महाजनपद की राजधानी वाराणसी थी। 'सोननंद जातक' से ज्ञात होता है कि मगध, कोशल तथा अंग पर काशी का अधिकार था। काशी का सबसे शक्तिशाली राजा 'ब्रह्मदत्त' था जिसने कोशल पर विजय प्राप्त की थी।
- काशी: बौद्ध भिक्षुओं के गेरुए वस्त्र जिन्हें संस्कृत में काशय कहा जाता था, काशी में बनाए जाते थे। श्रीराम की कहानी का प्राचीनतम वृत्तांत 'दशरथ जातक' दशरथ, राम आदि को अयोध्या की बजाय काशी का राजा उल्लिखित करता है। बुद्ध के काल तक कोशल ने काशी महाजनपद पर कब्ज़ा कर लिया था और काशी मगध एवं कोशल के मध्य युद्ध का कारण बना हुआ था।

1.6 छठी शताब्दी ई.पू. के धार्मिक आंदोलन
(Religious Movements in Six Century B.C.)

छठी शताब्दी ई.पू. में मध्य गंगा घाटी में अनेक धार्मिक संप्रदायों का उदय हुआ। जिनमें लगभग 62 संप्रदायों के बारे में जानकारी मिलती है। बौद्ध ग्रंथ ब्रह्मजाल सूत्र में 62 तथा जैन ग्रंथ सूत्र कृतांग में 368 सम्प्रदायों का उल्लेख मिलता है। इनमें जैन और बौद्ध संप्रदाय प्रमुख थे। इन धार्मिक संप्रदायों ने उपनिषदों द्वारा तैयार पृष्ठभूमि के आधार पर पुरातन वैदिक ब्राह्मण धर्म के अनेक दोषों जैसे- हिंसा प्रधान यज्ञों व उनसे संबद्ध कर्मकांडों आदि पर प्रहार किया, इसलिये इनको 'सुधारवादी आंदोलन' भी कहा गया है।

वास्तव में यह वही काल है जब चीन में कंफ्यूशियस, ईरान में जोरोस्टर (जरथुस्त्र) तथा यूनान में सुकरात धार्मिक परंपराओं एवं अंधविश्वासों का घोर विरोध कर रहे थे। उन्हीं दिनों भारत में पुरोहित वर्ग (ब्राह्मण) एवं शासक वर्ग (क्षत्रिय) के बीच ब्राह्मणों की श्रेष्ठता एवं धार्मिक कर्मकांडों को खुली चुनौती दी गई थी। इनमें जैन धर्म के संस्थापक वर्धमान महावीर और बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध दोनों क्षत्रिय थे।

प्रमुख धार्मिक आंदोलन

उद्‌भव के कारण: नवीन धार्मिक आंदोलनों के उद्‌भव के सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक कारण विद्यमान थे। ये निम्नलिखित थे-

- वैदिक काल में कर्मकांडों की अधिकता से जनसाधारण में भारी रोष व्याप्त था और वे नए विचारों की ओर आकर्षित हुए।
- इस समय सामाजिक स्तर पर वर्ण जातियों के रूप में परिवर्तित हो गए थे और पहले की अपेक्षा सामाजिक संबंधों में जटिलता आ गई थी। चारों जातियों में आपसी वर्चस्व की भावना के कारण द्वंद्व चल रहा था। समाज में शूद्रों की स्थिति सबसे दयनीय थी। वैश्य वर्ग को आर्थिक रूप से सम्पन्न होने के बावजूद सामाजिक रूप से अच्छी स्थिति प्राप्त नहीं थी। क्षत्रिय वर्ग के हाथों में सत्ता प्राप्त होने के बावजूद वह ब्राह्मणों से श्रेष्ठ नहीं माना जाता था। अत: श्रेष्ठता प्राप्त करने के लिये ब्राह्मण एवं क्षत्रियों में संघर्ष की स्थिति बनी हुई थी।
- कृषिमूलक अर्थव्यवस्था का विकास और विस्तार धार्मिक आंदोलन के उद्‌भव का मूल कारण था। लोहे के आविष्कार के कारण कृषि क्षेत्र में क्रांति आई। कृषि में पशुधन की आवश्यकता सबसे अधिक होती थी, लेकिन वैदिक कर्मकांडों के कारण पशुधन में कमी आने लगी जो कृषि के लिये बाधक सिद्ध हुआ। अत: अधिकांश जनता ने इन नए अहिंसावादी धार्मिक आंदोलनों को समर्थन दिया।

जैन धर्म

- जैन शब्द संस्कृत के 'जिन' शब्द से बना है, जिसका अर्थ विजेता होता है अर्थात् जिन्होंने अपने मन, वाणी एवं शरीर को जीत लिया हो।
- जैन अनुश्रुतियों और परंपराओं के अनुसार जैन धर्म में 24 तीर्थंकर हुए, परंतु इनमें से पहले 22 तीर्थंकरों की ऐतिहासिकता संदिग्ध है।
- जैन धर्म की स्थापना का श्रेय जैनियों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव या आदिनाथ को जाता है, जिन्होंने छठी शताब्दी ई.पू. जैन आंदोलन का प्रवर्तन किया। ऋषभदेव (प्रथम तीर्थंकर) व अरिष्टनेमि (22वें तीर्थंकर) का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है।
- ऋषभदेव के संबंध में ऐसा माना जाता है कि वे अयोध्या के राजा थे और उन्होंने अपने राज्य का त्याग पुत्र भरत के पक्ष में कर दिया था। पौराणिक परंपराओं के अनुसार इसी भरत के नाम पर ही देश का नाम 'भारतवर्ष' पड़ा।
- जैनधर्म के 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ थे, जो काशी के इक्ष्वाकु वंशीय राजा अश्वसेन के पुत्र थे। इनका काल महावीर से 250 ई.पू. माना जाता है। इनके अनुयायियों को 'निर्ग्रंथ' कहा जाता था।
- पार्श्वनाथ द्वारा प्रतिपादित चार महाव्रत इस प्रकार हैं- सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह (धन संचय का त्याग) तथा अस्तेय (चोरी न करना)।
- पार्श्वनाथ ने नारियों को भी अपने धर्म में प्रवेश दिया क्योंकि जैन ग्रंथ में स्त्री संघ की अध्यक्षा 'पुष्पचूला' का उल्लेख मिलता है।
- पार्श्वनाथ ने झारखंड के गिरिडीह ज़िले में 'सम्मेद पर्वत' पर शरीर को त्यागा।
- जैन धर्म के वास्तविक संस्थापक 24वें एवं अंतिम तीर्थंकर महावीर स्वामी थे।
- महावीर ने अपने जीवन काल में ही एक संघ की स्थापना की जिसमें 11 अनुयायी सम्मिलित थे। ये 'गणधर' कहलाए।
- राजगृह में 'उपालि' नामक गृहस्थ महावीर का शिष्य बना था।
- महावीर के कैवल्य (ज्ञान प्राप्ति) के चौहदवें वर्ष में सर्वप्रथम उनके दामाद जामालि तथा 16वें वर्ष में 'तीसगुप्त' ने उनका विरोध किया था। किंतु शीघ्र ये दोनों शांत कर दिये गए थे।
- जैन धर्म पुनर्जन्म एवं कर्मवाद में विश्वास करता है। इसके अनुसार कर्मफल ही जन्म तथा मृत्यु का कारण है।
- जैन धर्म में युद्ध और कृषि दोनों वर्जित है, क्योंकि दोनों में जीवों की हिंसा होती है।
- आरंभ में जैन धर्म में मूर्ति पूजा का प्रचलन नहीं था, किंतु बाद में महावीर सहित सभी पूर्व तीर्थंकरों की मूर्ति पूजा आरंभ हो गई।
- लिच्छवी राजा चेटक (महावीर स्वामी के मामा) ने जैन धर्म को अपनाकर अपना नाम 'जियसत्तु' (जित शत्रु) रख लिया था।
- चेटक नरेश की पाँच पुत्रियाँ थीं। **प्रथम-चेलना** बिंबिसार की रानी, **द्वितीय-प्रभावती** सिंधु सौवीर जनपद के नरेश उदयन की रानी, **तृतीय-पदमावती** चंपा नरेश दधिवाहन की रानी, **चतुर्थ-मृगावती** कौशाम्बी नरेश शतानीक की रानी, **पंचम-शिवा** अवंति नरेश चंड प्रद्योत की रानी थी। ये सभी राजा जैन धर्म के अनुयायी थे।
- बिंबिसार की 10 रानियों ने जैन धर्म को अपनाया था।

अभ्यास प्रश्न

1. प्रारंभिक वैदिक काल में व्रजपति कौन था?
   (a) योद्धा समूहों के प्रमुखों का नेतृत्व करने वाला अधिकारी
   (b) राजा का वरिष्ठ मंत्री
   (c) कबीलाई सभाओं की बैठकों की अध्यक्षता करने वाला अधिकारी
   (d) गांव का मुखिया *UGC-NET Paper-II, October 2020*

2. निम्नलिखित में से कौन जैन भिक्षुणी बनने वाली पहली महिला थी?
   (a) चंदना (b) खेमा
   (c) सुजाता (d) त्रिशला
   UGC-NET IInd Paper October, 2020

3. भारत की नवपाषाण संस्कृति में निम्नलिखित में से क्या पाया गया है?
   1. घिसकर और पॉलिश कर बनाए गए प्रस्तर उपकरण
   2. हल
   3. बैल गाड़ी
   4. खेती से उपजाए गए जौ और मटर
   नीचे दिये गए विकल्पों में से सही उत्तर चुनिये-
   (a) केवल 2, 3 और 4 (b) केवल 1, 3 और 4
   (c) केवल 1 और 4 (d) केवल 2 और 3
   UGC-NET IInd Paper October, 2020

4. भारतीय महापाषाण संस्कृति से निम्नलिखित में से क्या-क्या संबंधित है?
   1. लोहे के औजार और उपकरण
   2. घोड़े
   3. जोरवे भांड
   4. सार्कोफैगी
   5. डोलमेन
   नीचे दिये गए विकल्पों में से सही उत्तर चुनिये-
   (a) केवल 3, 4 और 5
   (b) केवल 1, 2, 3, 5
   (c) केवल 1, 2, 3, 4
   (d) केवल 2, 3 और 4
   UGC-NET IInd Paper October, 2020

5. सूची-I को सूची-II के साथ सुमेलित कीजिये-

सूची-I (पुरातात्विक स्थल)	**सूची-II (प्रदेश)**
A. जोरवे	1. गुजरात
B. कायथा	2. महाराष्ट्र
C. ओजियाना	3. मध्य प्रदेश
D. रोजदी	4. राजस्थान

नीचे दिये गए विकल्पों में से सही उत्तर चयन करें-

	A	B	C	D
(a)	2	3	4	1
(b)	1	2	3	4
(c)	3	4	2	1
(d)	2	3	1	4

UGC-NET IInd Paper October, 2020

6. सूची-I को सूची-II के साथ सुमेलित कीजिये–

सूची-I (वैदिक नदी)	**सूची-II (वर्तमान नाम)**
A. अस्किनी	1. ब्यास
B. परूष्णी	2. चेनाब
C. शुतुद्रि	3. रावी
D. विपाश्	4. सतलज

नीचे दिये गए विकल्पों में से सही उत्तर चयन करें–

	A	B	C	D
(a)	2	3	4	1
(b)	3	2	1	4
(c)	2	1	3	4
(d)	1	4	2	3

UGC-NET IInd Paper October, 2020

7. सूची-I को सूची-II के साथ सुमेलित कीजिये–

सूची-I (महाजनपद)	**सूची-II (राजधानी)**
A. अश्मक	1. कांपिल्य
B. चेदि	2. मथुरा
C. दक्षिण पंचाल	3. पोटन
D. शूरसेन	4. शुक्तिमती

नीचे दिये गए विकल्पों में से सही उत्तर चयन करें–

	A	B	C	D
(a)	1	2	3	4
(b)	4	3	1	2
(c)	3	4	1	2
(d)	2	1	4	3

UGC-NET IInd Paper October, 2020

8. नीचे दो कथन हैं: इनमें से एक को अभिकथन (A) और दूसरे को तर्क (R) कहा गया है–
   अभिकथन (A): ऐसा माना जाता है कि हड़प्पा सभ्यता के लोगों के दज़ला-फ़रात नदी घाटियों के लोगों के साथ व्यापारिक संबंध थे।
   तर्क (R): ऐसा कोई पुरातात्विक साक्ष्य नहीं है जो मेसोपोटामिया के साथ व्यापारिक संबंधों की परिकल्पना की पुष्टि करता हो।
   उपर्युक्त कथनों के आलोक में नीचे दिये गए विकल्पों में से सबसे उपर्युक्त उत्तर चुनें–
   (a) (A) और (R) दोनों सही है और (R), (A) की सही व्याख्या है।

कूटः

	A	B	C	D
(a)	2	4	1	3
(b)	1	3	2	4
(c)	2	3	4	1
(d)	3	1	2	4

UGC-NET Paper-II, June 2011

97. सूची-I को सूची-II से सुमेलित कीजिये तथा नीचे दिये गए कूटों से सही उत्तर चुनिये–

सूची-I	सूची-II
A. कारनेलियन बीड	1. बंगाल
B. ताम्र	2. बंदरगाह
C. अरिकामेडू	3. हड़प्पा
D. ताम्रलिप्ति	4. राजस्थान

कूटः

	A	B	C	D
(a)	4	2	3	1
(b)	4	1	2	3
(c)	4	3	2	1
(d)	3	4	2	1

UGC-NET Paper-II, June 2011

98. सूची-I को सूची-II से सुमेलित कीजिये तथा नीचे दिये गए कूटों से सही उत्तर चुनिये–

सूची-I	सूची-II
A. गणतंत्र	1. रुद्रदामन
B. उत्तरी काली पॉलिश्ड वेयर	2. छठी शती ई.पू.
C. गिरनार अभिलेख	3. कपिलवस्तु
D. शाक्य	4. गांगेय मैदान

कूटः

	A	B	C	D
(a)	2	4	3	1
(b)	2	4	1	3
(c)	4	2	1	3
(d)	2	1	4	3

UGC-NET Paper-II, June 2011

99. ऋग्वेद में पंचजन किसे द्योतित करता है?
(a) आर्यों की पाँच जनजातियाँ
(b) अनार्यों की पाँच जनजातियाँ
(c) एक गाँव के पाँच मुखिया
(d) पाँच गाँवों के मुखिया *UGC-NET Paper-II, June 2011*

उत्तरमाला

1. (a)	2. (a)	3. (c)	4. (c)	5. (a)
6. (a)	7. (c)	8. (c)	9. (a)	10. (d)
11. (d)	12. (c)	13. (b)	14. (b)	15. (c)
16. (b)	17. (b)	18. (b)	19. (b)	20. (c)
21. (b)	22. (a)	23. (a)	24. (b)	25. (a)
26. (b)	27. (a)	28. (d)	29. (a)	30. (d)
31. (b)	32. (a)	33. (a)	34. (c)	35. (a)
36. (c)	37. (a)	38. (d)	39. (a)	40. (d)
41. (b)	42. (b)	43. (a)	44. (b)	45. (b)
46. (d)	47. (a)	48. (a)	49. (b)	50. (c)
51. (c)	52. (d)	53. (d)	54. (d)	55. (d)
56. (b)	57. (b)	58. (c)	59. (a)	60. (b)
61. (c)	62. (a)	63. (c)	64. (b)	65. (b)
66. (a)	67. (b)	68. (b)	69. (d)	70. (a)
71. (a)	72. (c)	73. (c)	74. (a)	75. (c)
76. (a)	77. (a)	78. (d)	79. (a)	80. (c)
81. (d)	82. (c)	83. (b)	84. (c)	85. (d)
86. (a)	87. (c)	88. (c)	89. (b)	90. (d)
91. (d)	92. (c)	93. (b)	94. (a)	95. (d)
96. (a)	97. (d)	98. (b)	99. (a)	

इकाई II

- **राज्य से साम्राज्य तक :** मगध का उत्थान, सिकंदर के अधीन यूनानी आक्रमण और इसके प्रभाव, मौर्यों का प्रसार, मौर्यों की राज्य व्यवस्था, समाज, अर्थव्यवस्था, अशोक का धम्म और उसकी प्रकृति, मौर्य साम्राज्य का ह्रास और विघटन, मौर्य कालीन कला और वास्तुकला, अशोक के राज्यादेश : भाषा और लिपि।
- **साम्राज्य का अंत और क्षेत्रीय ताकतों का उद्‌भव :** इंडो-यूनानी, शुंग, सातवाहन, कुषाण और शक-क्षत्रप, संगम साहित्य, संगम साहित्य में प्रतिबिम्बित दक्षिण भारत की राज्य शासन प्रणाली और समाज। दूसरी शताब्दी बी.सी.ई. से तीसरी शताब्दी सी.ई. तक व्यापार और वाणिज्य, रोमन जगत के साथ व्यापार, महायान बौद्धधर्म, खारवेल और जैनधर्म का उद्‌भव, मौर्योत्तर काल में कला और वास्तुकला, गांधार, मथुरा और अमरावती शैलियाँ।
- **गुप्त वाकाटक युग :** राज्य शासन व्यवस्था और समाज, कृषि अर्थव्यवस्था, भू-अनुदान, भू-राजस्व और भू-अधिकार, गुप्तकालीन सिक्के। मंदिर स्थापत्य कला का प्रारम्भ, पौराणिक हिन्दू धर्म का उद्‌भव, संस्कृत भाषा और साहित्य का विकास, विज्ञान प्रौद्योगिकी, खगोल विज्ञान, गणित और औषधि में विकास।

2.1 मौर्य साम्राज्य (323-184 ई.पू.)
[The Maurya Empire (323-184 BC)]

चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के अंत में इतिहास के पृष्ठों में एक युगांतरकारी परिवर्तन हुआ। जिसमें चंद्रगुप्त मौर्य जैसे महानतम नेतृत्वकर्त्ता ने नंदों की अलोकप्रिय शासन व्यवस्था एवं मकदूनियाई दासता से जनता को मुक्त कर देश को राजनीतिक एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य किया था। चंद्रगुप्त मौर्य द्वारा स्थापित इस नई शासन व्यवस्था को हम मौर्य साम्राज्य के नाम से जानते हैं।

मौर्य साम्राज्य (323-184 ई.पू.)

↓

मौर्य वंश की जानकारी के स्रोत

साहित्यिक साक्ष्य
- अर्थशास्त्र
- पुराण
- मुद्राराक्षस नाटक
- बौद्ध एवं जैन ग्रंथ आदि

विदेशी विवरण
- मेगस्थनीज
- स्ट्रैबो
- कर्टियस आदि।

पुरातात्त्विक साक्ष्य
- अशोक के अभिलेख
- जूनागढ़ (गिरनार) अभिलेख
- काली पॉलिश वाले मृद्‌भांड
- भवन : स्तूप एवं गुफ़ा
- मुद्रा : आहत मुद्रा (पंचमार्क)

साहित्यिक साक्ष्य

- ब्राह्मण, बौद्ध तथा जैन साहित्य मौर्य वंश के इतिहास पर प्रकाश डालते हैं।
- विशाखदत्त द्वारा 9वीं सदी में लिखे गए नाटक 'मुद्राराक्षस' में चाणक्य की कूटनीतियों का वर्णन है।
- ब्राह्मण साहित्य में पुराण, कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र, विशाखदत्त कृत मुद्राराक्षस, सोमदेव कृत कथासरित्सागर, क्षेमेंद्र कृत बृहत्कथामंजरी तथा पतंजलि के महाभाष्य आदि से मौर्यकालीन जानकारी मिलती है।
- बौद्ध ग्रंथों में दीपवंश, महावंश, महावंश टीका, महाबोधिवंश, दिव्यावदान आदि प्रमुख हैं। इनसे चंद्रगुप्त मौर्य, बिंदुसार, अशोक तथा परवर्ती मौर्य शासकों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।
- जैन ग्रंथों में प्रमुख स्रोत हैं- भद्रबाहु का कल्पसूत्र एवं हेमचंद्र का परिशिष्टपर्वन।

नोट: इनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण 'अर्थशास्त्र' है, जो मौर्य प्रशासन के अतिरिक्त चंद्रगुप्त मौर्य के जीवन पर भी प्रकाश डालता है।

विदेशी विवरण

- विदेशी लेखकों में स्ट्रैबो, कर्टियस, डायोडोरस, प्लिनी, एरियन, जस्टिन, प्लूटार्क, नियार्कस, ऑनेसिक्रिटस व अरिस्टोबुलस आदि ने मौर्य वंश के बारे में लिखा है।
- जस्टिन आदि यूनानी विद्वानों ने चंद्रगुप्त मौर्य को 'सैंड्रोकोट्टस' कहा है जबकि एरियन तथा प्लूटार्क ने 'एंड्रोकोट्टस'।
- सर्वप्रथम विलियम जोन्स ने ही 'सैंड्रोकोट्टस' की पहचान चंद्रगुप्त मौर्य से की है।
- मेगस्थनीज ने 'इंडिका' में मगध की राजधानी पाटलिपुत्र का विस्तार से वर्णन किया।

इंडिका-मेगस्थनीज

मेगस्थनीज की 'इंडिका' मौर्य इतिहास की जानकारी उपलब्ध कराने का प्रमुख स्रोत है। परंतु यह अपने मूलरूप में प्राप्त नहीं हुई है, बल्कि इसके कुछ भाग परवर्ती लेखकों के ग्रंथों से प्राप्त होते हैं। इनमें स्ट्रैबो, प्लिनी, डायोडोरस, एरियन, प्लूटार्क तथा जस्टिन के नाम उल्लेखनीय हैं।

पुरातात्त्विक साक्ष्य

- इस काल के पुरातात्त्विक साक्ष्यों में अशोक के अभिलेख अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इनसे अशोक के शासनकाल की समस्त जानकारी मिलती है।
- अशोक के 40 से अधिक अभिलेख भारत, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान के विभिन्न भागों से प्राप्त हुए हैं।
- अशोक के अभिलेखों के अतिरिक्त शक महाक्षत्रप रुद्रदामन का जूनागढ़ (गिरनार) अभिलेख भी मौर्य इतिहास के विषय में जानकारी प्रदान करता है। इस अभिलेख में चंद्रगुप्त मौर्य और अशोक के नामों का उल्लेख मिलता है।

रुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख

- इस अभिलेख से यह पता चलता है कि चंद्रगुप्त मौर्य के समय सौराष्ट्र प्रांत में सुदर्शन झील का निर्माण करवाया गया। इस समय वहाँ का राज्यपाल पुष्यगुप्त वैश्य था।
- अशोक के समय सौराष्ट्र के राज्यपाल तुषाष्फ (यवन) ने सुदर्शन झील का पुनर्निमाण करवाया।
- मौर्यात्तर काल में शक शासक रुद्रदामन ने इस झील का पुनर्निर्माण करवाया, उस समय सुविशाख सौराष्ट्र का राज्यपाल था।
- गुप्त सम्राट स्कंदगुप्त के समय पर्णदत्त सौराष्ट्र का राज्यपाल था। उसके पुत्र एवं गिरिनार नगर के प्रशासक चक्रपालित ने पुनः इस झील की मरम्मत करवाई।
- जूनागढ़ अभिलेख में चंद्रगुप्त मौर्य, अशोक, रुद्रदामन और स्कंदगुप्त जैसे शासकों एवं उनके राज्यपालों का विवरण प्राप्त होता है।

2.2 मौर्योत्तर काल
(Post-Mauryan Period)

मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद भारत में कई साम्राज्य अस्तित्व में आए किंतु उतना विस्तृत सीमा क्षेत्र किसी का न था। 200 ई.पू. से मध्य एशिया और भारत के बीच घनिष्ट एवं व्यापक व्यापारिक संबंध कायम हुए। पूर्वी भारत, मध्य भारत तथा दक्कन में कई राजवंश शासन सत्ता में आए, जैसे- शुंग, कण्व और सातवाहन वहीं पश्चिमोत्तर भारत में मध्य एशिया से आए इंडो-ग्रीक, शक एवं पार्थियन वंश प्रमुख थे। जिनमें कुषाण वंश सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

मौर्योत्तर काल

देशी शासक	विदेशी शासक
• शुंग वंश	• इंडो-ग्रीक
• कण्व वंश	• शक
• सातवाहन वंश	• पार्थियन
• चेदि वंश/महामेघवाहन वंश	• कुषाण वंश

शुंग वंश

- पुष्यमित्र शुंग ने 184 ई.पू. में मौर्य शासक बृहद्रथ की हत्या करके 'शुंग वंश' की स्थापना की।
- बाणभट्ट ने 'हर्षचरित' में पुष्यमित्र को 'अनार्य' कहा है। पुष्यमित्र कट्टर ब्राह्मणवादी था।

शुंग वंश के इतिहास की जानकारी साहित्यिक एवं पुरातात्त्विक दोनों साक्ष्यों से प्राप्त होती है-

साहित्यिक स्रोत

- **पुराण (वायु और मत्स्य पुराण):** इससे पता चलता है कि शुंग वंश का संस्थापक पुष्यमित्र शुंग था।
- **हर्षचरित:** इसकी रचना बाणभट्ट ने की थी। इससे पता चलता है कि पुष्यमित्र ने अंतिम मौर्य नरेश बृहद्रथ की हत्या कर सिंहासन पर अधिकार कर लिया।
- **पतंजलि का महाभाष्य:** इस ग्रंथ में यवनों के आक्रमण की चर्चा है।
- **गार्गी संहिता:** इसमें भी यवन आक्रमण का उल्लेख है। यह एक ज्योतिष ग्रंथ है।
- **मालविकाग्निमित्रम्:** यह कालिदास का नाटक है, जिससे शुंगकालीन राजनीतिक गतिविधियों का ज्ञान प्राप्त होता है।
- दिव्यावदान: इसमें पुष्यमित्र शुंग को अशोक द्वारा निर्मित 84,000 स्तूपों को तोड़ने वाला बताया गया है।

पुरातात्त्विक स्रोत

- अयोध्या अभिलेख: इस अभिलेख को धनदेव ने लिखवाया था। इसमें पुष्यमित्र शुंग द्वारा कराए गए दो अश्वमेध यज्ञों की चर्चा है।
- बेसनगर का अभिलेख: यह यवन राजदूत हेलियोडोरस का है जो गरुड़ स्तंभ के ऊपर खुदा है। इससे भागवत धर्म की लोकप्रियता का पता चलता है।
- भरहुत का स्तंभलेख: इससे भी शुंग काल के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

- उपर्युक्त साक्ष्यों के अतिरिक्त साँची, बेसनगर, बोधगया आदि स्थानों से प्राप्त स्तूप एवं स्मारक शुंगकालीन कला एवं स्थापत्य की विशिष्टता का ज्ञान कराते हैं। शुंग काल की कुछ मुद्राएँ कौशांबी, अहिच्छत्र, अयोध्या तथा मथुरा से प्राप्त हुई हैं, जिनसे तत्कालीन ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त होती है।

पुष्यमित्र शुंग (184-75 ई.पू.)

- पुष्यमित्र मौर्य वंश के अंतिम शासक बृहद्रथ का सेनापति था।
- 'दिव्यावदान' से पता चलता है कि वह पुष्यधर्म का पुत्र था।
- धनदेव के अयोध्या अभिलेख के अनुसार, पुष्यमित्र ने दो अश्वमेध यज्ञों का अनुष्ठान किया। राजपुरोहित पतंजलि यज्ञों के पुरोहित थे।
- बौद्ध ग्रंथों के अनुसार पुष्यमित्र बौद्ध धर्म का उत्पीड़क था। उसने कई बौद्ध विहारों को नष्ट किया तथा बौद्ध भिक्षुओं की हत्या की थी।
- संभवतः पुष्यमित्र बौद्ध विरोधी था, लेकिन भरहुत स्तूप बनाने का श्रेय उसे ही दिया जाता है।

विजय अभियान (लगभग 184 ई.पू.)

- पुष्यमित्र के शासनकाल में कई विदेशी आक्रमणकारियों के द्वारा भारत पर आक्रमण किये गए।
- पुष्यमित्र के राजा बन जाने पर मगध साम्राज्य को बहुत बल मिला था। जो राज्य मगध की अधीनता त्याग चुके थे, पुष्यमित्र ने उन्हें फिर से अपने अधीन कर लिया था।
- पुष्यमित्र ने अपने विजय अभियानों से सीमा का विस्तार किया।

विदर्भ (बरार) की विजय

- यज्ञसेन मौर्यों की तरफ से विदर्भ के शासक पद पर नियुक्त हुआ था, परंतु मगध साम्राज्य की दुर्बलता का लाभ उठाकर उसने स्वयं को विदर्भ का स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया।
- यज्ञसेन को शुंगों का 'स्वाभाविक शत्रु' बताया गया है।
- पुष्यमित्र के आदेश से अग्निमित्र ने उस पर आक्रमण किया और उसे परास्त कर विदर्भ को फिर से मगध साम्राज्य के अधीन कर लिया।
- कालिदास के प्रसिद्ध नाटक 'मालविकाग्निमित्रम्' में यज्ञसेन की चचेरी बहन मालविका और अग्निमित्र के प्रेम की कथा के साथ-साथ विदर्भ विजय का वृत्तांत भी उल्लिखित है।

2.3 संगम युग
(Sangam Period)

भारत के सुदूर तीनों ओर समुद्र से घिरा दक्षिणतम भू-भाग का प्रायद्वीप 'तमिलकल' या तमिलहम' के नाम से विख्यात था। ऐतिहासिक काल के आरंभिक युग में दक्षिण भारत का इतिहास जानने के लिये, जिस तमिल साहित्य का उल्लेख तीसरी या चौथी सदी के 'संगम साहित्य में प्रतिबिंबित है, उसे 'संगम-साहित्य' के नाम से जाना जाता है। संगम का अर्थ- तमिल कवियों का संघ, 'परिषद्' अथवा 'गोष्ठी' से है, जिसे राजकीय संरक्षण प्राप्त होता था। इसके अतिरिक्त अशोक के अभिलेख, खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख, तथा यूनानी अज्ञात लेखक की रचना 'पेरिप्लस ऑफ द एरिथ्रियन सी' इत्यादि से इसकी जानकारी मिलती है।

तमिल साहित्य का सबसे प्राचीन उपलब्ध अंश संगम-साहित्य के विभिन्न आठ संग्रह-ग्रंथों नत्रिणै, कुरंदोगै, ऐंगुरूनूरू, पादिट्रपत्तु, परिपाडल, कलित्तोगै, अहनानुरू तथा पुरनानुरू में समाहित मिलता है। इन्हें सम्मिलित रूप से 'इत्थुथोकै' कहा जाता है। इसके अतिरिक्त एक नौवाँ समूह भी है। जिसका नाम 'पत्तुप्पाट्टु' है।

'संगम' अथवा 'सम्मेलन'

प्रथम संगम

इसका आयोजन पांड्यों की प्राचीन राजधानी 'मदुरा' (जो अब समुद्र में विलीन हो गई) में हुआ था। इसकी अध्यक्षता 'अगस्त्य ऋषि' ने की और इन्हीं को दक्षिण में आर्य सभ्यता के प्रचार का श्रेय भी दिया जाता है।

- प्रथम संगम में सदस्यों की कुल संख्या 549 थी। इस संगम में 4499 कवियों ने अपनी रचनाएँ प्रकाशित करवाने की आज्ञा प्राप्त की।
- प्रथम संगम को 89 पांड्य राजाओं ने संरक्षण प्रदान किया, जो 4,400 वर्षों तक चला।
- इस संगम में संकलित प्रमुख ग्रंथ- अकट्टियम् (अगस्त्यम्), परिपादल, मुदुनारै, मुदुकुरुकु तथा कलरिआविरै थे। वर्तमान में इनमें से कोई भी रचना उपलब्ध नहीं है।

द्वितीय संगम

इसका आयोजन कपाटपुरम (अलवै) में किया गया तथा इसकी भी अध्यक्षता अगस्त्य ने की थी।

- द्वितीय संगम में 49 सदस्य सम्मिलित हुए तथा 59 पांड्य नरेशों का संरक्षण मिला और परंपरा के अनुसार 3700 कवियों ने अपनी रचनाओं को प्रकाशित करवाने की अनुमति प्राप्त की।
- इस संगम में संकलित ग्रंथों में से एकमात्र ग्रंथ- 'तोल्काप्पियम्' ही उपलब्ध है, जिसे अगस्त्य ऋषि के शिष्य 'तोल्काप्पियर' ने रचा था। यह तमिल व्याकरण का महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है।

तृतीय संगम

इसका आयोजन पांड्य राजाओं की राजधानी 'मदुरै' में किया गया। इस संगम की अध्यक्षता 'नक्कीरर' ने की थी।

- तृतीय संगम में 49 सदस्य सम्मिलित हुए तथा 49 पांड्य राजाओं का संरक्षण मिला जो 1850 वर्षों तक चलता रहा तथा 449 कवियों को उनकी रचनाएँ प्रकाशित करने की अनुमति प्रदान की गई। वर्तमान में इनमें से मात्र 49 रचनाएँ ही उपलब्ध हैं।
- इस संगम द्वारा संकलित में प्रमुख ग्रंथ- नेदुंथोकै, नत्रिनई, कुरुंथौके, एंकुरुंनूरु, परिपादल, पदित्रुप्पट आदि।

संगम अथवा सम्मेलन

संगम	अध्यक्ष	संरक्षक	स्थल	सदस्यों की संख्या
प्रथम	अगस्त्य ऋषि	पाण्ड्य शासक	मदुरा	549
द्वितीय	अगस्त्य ऋषि सहअध्यक्ष तोल्काप्पियर	पाण्ड्य शासक	कपाटपुरम (अलवै)	49
तृतीय	नक्कीरर	पाण्ड्य शासक	मदुरै (उत्तरी मदुरा)	49

- तमिल अनुश्रुतियों के अनुसार तीन परिषदों का आयोजन कुल 9990 वर्षों तक चला तथा इसमें 8598 कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से संगम साहित्य की उन्नति की और कोई 197 पाण्ड्य शासकों ने संरक्षण प्रदान किया।

संगम साहित्य

संगम साहित्य का रचनाकाल 100-250 ई. तक मानना समीचीन प्रतीत होता है। संगम साहित्य को तीन भागों में विभक्त किया जाता है- पत्थुपात्तु, इत्थुथोकै एवं पदिनेनकीलकंक्कु।

संगम-साहित्य के दो विषय-

- **अहूम:** इसका संबंध प्रेम से है।
- **पुरम:** ये युद्ध से संबंधित है।

संगम साहित्य	रचनाकार
तोल्काप्पियम	तोलकाप्पियर
शिलप्पादिकारम्	इलंगोआदिगल
मणिमेखलै	सीतलैसत्तनार
जीवकचिंतामणि	तिरुतक्कदेवर
तिरुक्कुरल	तिरुवल्लुवर
अहनानूरु	रुद्रसर्मन
मरुगरुप्पादय	नक्कीरर

2.4 गुप्त साम्राज्य
(The Gupta Empire)

कुषाण साम्राज्य के पतन के पश्चात् भारत में किसी प्रभुत्त्वशाली राजनीतिक शाक्ति का अस्तित्व नहीं रहा। चौथी सदी के आरंभ में यहाँ अनेक राज्य एवं गणराज्य उदित हुए, जो आपसी वैमनस्यता एवं अराजकता की स्थिति में कायम थे। ऐसे में गुप्तों ने 'मगध' क्षेत्र से उठकर 'प्रयाग' को अपनी राजनीति का केंद्र-बिंदु बनाया और वे पड़ोस के इलाकों में फैलते गए तथा कालांतर में एक विशाल गुप्त साम्राज्य की स्थापना की।

संभवतः गुप्त लोग कुषाणों के सामंत रहे थे। कुषाणों से प्राप्त सैन्य तकनीक एवं अन्य राज्यों से वैवाहिक संबंधों ने गुप्त साम्राज्य के प्रसार एवं सुदृढ़ीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

गुप्त राजवंश के इतिहास के स्रोत

गुप्त राजवंश का इतिहास जानने के लिये निम्नलिखित तीन महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं- साहित्यिक स्रोत, पुरातात्त्विक स्रोत और विदेशी यात्रियों के विवरण।

साहित्यिक स्रोत

- विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड पुराणों से हमें गुप्त साम्राज्य के बारे में जानकारी मिलती है।
- विशाखदत्त कृत 'देवीचंद्रगुप्तम्' नाटक से रामगुप्त एवं चंद्रगुप्त द्वितीय के विषय में सूचना मिलती है।
- वात्स्यायन कृत 'कामसूत्र' एवं शूद्रक कृत 'मृच्छकटिकम्' से गुप्तकालीन शासन व्यवस्था एवं नगरीय जीवन के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।
- चंद्रगुप्त द्वितीय के दरबारी कवि कालिदास की कृतियों-मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोवर्शीयम् एवं अभिज्ञानशाकुंतलम् में गुप्तकाल की शांति एवं समृद्धि का चित्रण मिलता है।

पुरातात्त्विक स्रोत

- पुरातात्त्विक स्रोत में अभिलेखों, सिक्कों तथा स्मारकों से गुप्त राजवंश के इतिहास की जानकारी प्राप्त होती है।
- समुद्रगुप्त के 'प्रयाग प्रशस्ति या इलाहाबाद स्तंभलेख' से उसके बारे में जानकारी मिलती है।
- स्कंदगुप्त के 'भीतरी स्तंभलेख' से हूण आक्रमण के बारे में जानकारी मिलती है, जबकि स्कंदगुप्त के 'जूनागढ़ अभिलेख' से इस बात की जानकारी प्राप्त होती है कि उसने सुदर्शन झील का पुनर्निर्माण करवाया था।
- गुप्तकालीन राजाओं के सोने, चांदी तथा तांबे के सिक्के प्राप्त हुए हैं। इस काल में सोने के सिक्कों को 'दीनार', चांदी के सिक्कों को 'रुपक' अथवा 'रुप्यक' तथा तांबे के सिक्कों को 'माषक' कहा जाता था।
- गुप्तकालीन स्वर्ण सिक्कों का सबसे बड़ा ढेर राजस्थान प्रांत के 'बयाना' से प्राप्त हुआ है।
- गुप्तकालीन स्मारकों, जैसे-मंदिर, मूर्तियाँ, चैत्यगृह आदि से तत्कालीन कला और स्थापत्य की जानकारी मिलती है।
- अजंता एवं बाघ की गुफाओं के कुछ चित्र भी गुप्तकालीन माने जाते हैं।

विदेशी यात्रियों के विवरण

इस काल के प्रमुख विदेशी यात्री-

- **फाहियान:** यह चीनी यात्री था और चंद्रगुप्त द्वितीय के शासनकाल में भारत आया था। इसने मध्य देश का वर्णन किया है।
- **ह्वेनसांग:** इस चीनी बौद्ध यात्री ने कुमारगुप्त प्रथम, बुधगुप्त, नरसिंहगुप्त 'बालादित्य' आदि गुप्त शासकों का उल्लेख किया है। इसके विवरण से पता चलता है कि कुमारगुप्त ने 'नालंदा महाविहार' की स्थापना करवाई थी।

गुप्तों की उत्पत्ति के संदर्भ में विभिन्न मत

विद्वान	मत
एलन, एस.के. आयंगर, ए.एस. अल्टेकर, रोमिला थापर एवं रामशरण शर्मा	वैश्य
सुधाकर चट्टोपाध्याय, रमेशचंद्र मजूमदार एवं गौरीशंकर हीराचंद्र ओझा	क्षत्रिय
हेमचंद्र राय चौधरी	ब्राह्मण
काशी प्रसाद जायसवाल	जर्ट अथवा जाट

गुप्तों के उदय से पूर्व की राजनीतिक स्थिति

इस समय भारत में दो प्रकार के राजवंश थे- राजतंत्र एवं गणतंत्र और इसके अतिरिक्त कुछ विदेशी शक्तियाँ भी थीं।

रातजंत्र

गुप्तों के उदय के पूर्व उत्तर तथा दक्षिण भारत में अनेक शक्तिशाली राजतंत्रों का अस्तित्व था। इनमें कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं-

नाग वंश

- पुराणों के अनुसार पद्मावती, मथुरा एवं कांतिपुर में नाग कुलों का शासन था।
- पद्मावती (ग्वालियर के पास पदमपवैया) के नाग लोग 'भारशिव' कहलाए क्योंकि वे अपने कंधों पर शिवलिंग वहन करते थे।
- भारशिवों का वाकाटकों के साथ वैवाहिक संबंध था।

बडवा का मौखरि वंश

- बडवा (प्राचीन कोटा रियासत) में मौखरियों की एक शाखा तृतीय शताब्दी ई. के आरंभ में शासन कर रही थी।

दृष्टि The Vision

अब घर बैठे कीजिये आई.ए.एस. की संपूर्ण तैयारी क्योंकि हम आ रहे हैं आपके घर

ऑनलाइन फाउंडेशन कोर्स

सामान्य अध्ययन (प्रिलिम्स + मेन्स)

डॉ. विकास दिव्यकीर्ति के निर्देशन में

मोड : पेन ड्राइव

एडमिशन प्रारंभ

सर्वश्रेष्ठ अध्यापकों की 500+ कक्षाओं के साथ आपको मिलेंगी ये सुविधाएँ एकदम निशुल्क

3 वर्षों तक प्रिलिम्स टेस्ट सीरीज़	₹~~24000/-~~ निशुल्क
3 वर्षों तक प्रिलिम्स क्रैश कोर्स	₹~~15000/-~~ निशुल्क
सभी टॉपिक्स के प्रिंटेड नोट्स	₹~~15000/- (DLP)~~ निशुल्क
मुख्य परीक्षा के 24 टेस्ट	₹~~10000/-~~ निशुल्क
3 वर्षों तक करेंट अफेयर्स टुडे	₹~~4320/-~~ निशुल्क
प्रिलिम्स प्रैक्टिस सीरीज़ (6 बुक्स)	₹~~1815/-~~ निशुल्क
मेन्स कैप्सूल सीरीज़ (5 बुक्स)	₹~~1240/-~~ निशुल्क

छूट की कुल राशि : ₹71,375/-

कोर्स की प्रमुख विशेषताएँ

1. डॉ. विकास दिव्यकीर्ति तथा देश के सर्वश्रेष्ठ शिक्षकों की टीम द्वारा अध्यापन।
2. डॉ. विकास दिव्यकीर्ति द्वारा एथिक्स (संपूर्ण), राजव्यवस्था (व्यापक अंश) और समाज (सैद्धांतिक पक्ष) का अध्यापन।
3. कुल 1200+ घंटों की 500+ कक्षाएँ।
4. प्रत्येक कक्षा को 3 बार तक देखने की सुविधा। कोर्स की वैधता बैच शुरू होने से 3 वर्षों तक।
5. कक्षाओं में अवधारणाएँ स्पष्ट करने व उत्तर-लेखन की तकनीक विकसित कराने पर विशेष बल। पूर्व-परीक्षाओं में पूछे जा चुके और भविष्य में संभावित सैकड़ों प्रश्नों पर चर्चा व अभ्यास।
6. संशय निवारण के लिये एकेडमिक सपोर्ट टीम की सुविधा उपलब्ध। नियमित रूप से डाउट क्लासेज़ तथा ऑनलाइन मीटिंग्स की भी व्यवस्था।
7. दृष्टि के किसी भी सेंटर (दिल्ली, प्रयागराज, जयपुर) पर सामान्य अध्ययन के क्लासरूम कोर्स में एडमिशन लेने पर शुल्क में 20% की विशेष छूट (शर्तें लागू)।

नोट्स व अन्य पाठ्यसामग्री भेजने की प्रक्रिया

1. आपके एडमिशन लेने के बाद क्रमश: 7-8 महीने में आपके घर तक 8 पेन ड्राइव्स और पाठ्यसामग्री भेज दी जाएगी।
2. इस कोर्स से संबंधित सभी नोट्स आपके पास एक निर्धारित शेड्यूल के अनुसार भेजे जाएंगे। जैसे ही आप इस कोर्स के शुल्क का भुगतान करेंगे, उसके 1-2 दिनों में हम आपके पते पर नोट्स का पहला सेट स्पीड पोस्ट या कूरियर सर्विस से भेज देंगे। 7-10 दिनों में आपके पास नोट्स का पहला पैकेट पहुँच जाएगा। (नोट : वर्तमान में कोविड-19 महामारी के कारण नोट्स पहुँचने में कुछ अधिक समय लग रहा है।)

अतिरिक्त जानकारी के लिये 9311406442 नंबर पर कॉल करें या GS लिखकर मैसेज या वाट्सएप करें

इंस्टॉलमेंट्स पर भी उपलब्ध ! लॉग-इन कीजिये : www.drishtiIAS.com

अपने एंड्रॉयड फोन पर इंस्टॉल करें **Drishti Learning App**

इकाई III

- **हर्ष और उसका युग :** प्रशासन और धर्म।
- आंध्र देश में सालंकायन वंश और विष्णुकुंडीन वंश।
- **क्षेत्रीय राज्यों का उद्भव :** दक्षिण में राज्य : गंग, कदंब वंश, पश्चिमी और पूर्वी चालुक्य वंश, राष्ट्रकूट, कल्याणी चालुक्य, काकतीय, होयसल और यादव वंश।
- **दक्षिणी भारत में साम्राज्य :** पल्लव, चेर, चोल, पाण्ड्य वंश।
- **पूर्वी भारत में साम्राज्य :** बंगाल के पाल और सेन, कामरूप के वर्मन, उड़ीसा के भौमाकार और सोमवंशी।
- **पश्चिमी भारत में साम्राज्य :** बल्लभी के मैत्रिक और गुजरात के चालुक्य वंश।
- **उत्तरी भारत के साम्राज्य :** गुर्जर-प्रतिहार, कलचुरि-चेदि, गहड़वाल वंश और परमार वंश।
- **प्रारम्भिक मध्यकालीन भारत की विशेषताएँ :** प्रशासन और राजनीतिक ढाँचा, राजतंत्र का वैधीकरण।
- **कृषि अर्थव्यवस्था :** भूमि अनुदान, उत्पादन संबंधी बदलते संबंध, श्रेणीबद्ध भूमि अधिकार और किसान वर्ग, जल संसाधन, कर प्रणाली, सिक्के और मुद्रा प्रणाली।
- **व्यापार और शहरीकरण :** व्यापार का ढाँचा और शहरी बस्तियों का स्वरूप, पत्तन और व्यापार मार्ग। व्यापारी माल और विनिमय, व्यापार संघ (गिल्ड); दक्षिण-पूर्व एशिया में व्यापार और उपनिवेशीकरण।
- **ब्राह्मणीय धर्मों का विकास :** वैष्णववाद और शैववाद; मंदिर; संरक्षण और क्षेत्रीय बहुशाखन। मंदिर स्थापत्य कला और क्षेत्रीय शैलियाँ।
- **दान, तीर्थ और भक्ति, तमिल भक्ति आंदोलन :** शंकर, माधव और रामानुजाचार्य।
- **समाज :** वर्ण, जाति और जातियों का प्रचुरोद्भवन, स्त्रियों की स्थिति, लिंग, विवाह और सम्पत्ति संबंध; सार्वजनिक जीवन में स्त्रियाँ। किसानों के रूप में जनजातियाँ और वर्ण व्यवस्था में उनका स्थान, अस्पृश्यता।
- **शिक्षा और शैक्षिक संस्थाएँ :** शिक्षा के केंद्रों के रूप में अग्रहार, मठ और महाविहार। क्षेत्रीय भाषाओं का विकास।
- **प्रारम्भिक मध्यकालीन भारत में राज्य निर्माण की चर्चाएँ :** (अ) सामन्त मॉडल (ब) खंडीय मॉडल (स) समन्वयी मॉडल।
- **अरब के साथ संबंध :** सुलेमान गज़नवी विजय, अलबरूनी का यात्रा विवरण।

3.1 गुप्तोत्तर काल/पूर्व मध्यकाल
(Post-Gupta Period/Pre-Medieval Period)

छठी सदी ई. के मध्य तक भारतीय राजनीति में गुप्त साम्राज्य का विघटन हो गया था। ऐसे में राजनीतिक विकेंद्रीकरण, क्षेत्रीयता एवं सामंतवादी प्रवृत्तियों का आगमन हुआ। इस दौर में उत्तर एवं दक्षिण भारत में कुछ प्रमुख राजवंशों का उदय हुआ। लेकिन ये राजवंश सम्पूर्ण भारत को एक शासन सत्ता के सूत्र में नहीं पिरो सके। वास्तविकता यह रही कि ये बड़े-बड़े राजवंश आपसी वैमनस्यता एवं पारस्परिक संघर्षों में रत रहे और अन्ततः राजनीतिक व्यवस्था की यह प्रवृत्ति तुर्कों के आगमन तक जारी रही।

उत्तर भारत के राजवंश

राजवंश	स्थान	प्रमुख शासक	उपलब्धि
मैत्रक	बल्लभी	भट्टारक, धरसेन, ध्रुवसेन प्रथम, धरनपट्ट गुहसेन, शिलादित्य प्रथम	गुप्तोत्तर काल के नवोदित राज्यों पर सबसे लंबे समय तक शासन किया।
मौखरि	कन्नौज	हरिवर्मा, ईशानवर्मा, सर्ववर्मा	इन्होंने हूणों को पराजित कर, पूर्वी भारत को उनके आक्रमण से बचाया।
पुष्यभूति	थानेश्वर	पुष्यभूति, प्रभाकरवर्धन, राज्यवर्धन, हर्षवर्धन	विशाल राज्य स्थापित किया।
परवर्ती गुप्त	मगध	कृष्ण गुप्त, महासेन गुप्त, देवगुप्त, आदित्य सेन	मौखरियों से राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता रही।
गौड़	बंगाल	शशांक	थानेश्वर एवं कन्नौज शासकों से इसकी शत्रुता रही।

बल्लभी का मैत्रक वंश

- बल्लभी के मैत्रक वंश की स्थापना 'भट्टार्क' नामक व्यक्ति ने की थी, जो गुप्तों के समय एक सैन्य पदाधिकारी था।
- पांचवी शती ई. के अंत तक उसके उत्तराधिकारियों ने सुराष्ट्र (काठियावाड़) में अपना शक्तिशाली राज्य स्थापित कर रखा था।
- मैत्रक वंश के प्रारंभिक शासक भट्टार्क एवं उसका पुत्र धरसेन ने 'सेनापति' की उपाधि धारण की। इससे विदित होता है कि ये गुप्तों के अधीन शासन करते थे।
- इस वंश के प्रमुख शासक-द्रोण सिंह, ध्रुवसेन प्रथम, धरनपट्ट गुहसेन, धरसेन द्वितीय (571-90 ई.) धर्मादित्य, (606-612 ई.), शिलादित्य प्रथम, धरसेन तृतीय, ध्रुवसेन द्वितीय 'बालादित्य' (629-41 ई.) एवं धरसेन चतुर्थ (646-650 ई.) थे।
- मैत्रक वंश का अंतिम ज्ञात शासक 'शिलादित्य सप्तम' है, जिसने 766 ई. तक शासन किया था।
- मैत्रक वंशी नरेश बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। उनके शासन-काल में बल्लभी विश्वविद्यालय की स्थापना हुई, जो 7वीं सदी में बौद्ध शिक्षा का प्रमुख केंद्र रहा था।

गौड़ वंश

- शशांक गौड़ वंश का संस्थापक तथा सबसे प्रतापी राजा था।
- उसने हर्षवर्धन के भाई राज्यवर्धन का वध किया था। इसके पश्चात् हर्षवर्धन ने शशांक को पराजित किया और उसकी महत्त्वाकांक्षाओं को बंगाल तक सीमित कर दिया था। शशांक के बाद गौड़ वंश का पतन हो गया। बाद में इसी वंश के किसी क्षत्रिय ने बंगाल में समृद्ध और शक्तिशाली पाल वंश की नींव रखी था।

नोटः एक अन्य मान्यता के अनुसार, बंगाल का शासक शशांक (सन् 602-620 ई.) ब्राह्मण धर्म के शैव संप्रदाय का अनुयायी था और बौद्ध धर्म का कट्टर शत्रु। उसने बोधिवृक्ष को कटवा दिया था।

कन्नौज का मौखरि वंश

- मौखरि गुप्तों के सामंत थे।
- लगभग 510 ई. में हरिवर्मा ने 'कन्नौज' में मौखरि वंश की स्थापना कर 'महाराज' की उपाधि धारण की थी।
- मौखरियों को सामंत की स्थिति से स्वतंत्र करने वाला प्रतापी शासक 'ईशान वर्मा' (540–574 ई.) था। उसने 'महाराजाधिराज' की उपाधि धारण की थी।
- अफसढ़ अभिलेख के अनुसार 'कुमारगुप्त' और 'ईशान वर्मा' के बीच भीषण युद्ध हुआ, जिसमें 'कुमारगुप्त' ने 'ईशान वर्मा' को परास्त कर 'मगध' को मौखरियों से जीत लिया था।
- असीरगढ़ से प्राप्त एक मुहर में सर्ववर्मा को 'महाराजाधिराज' कहा गया है।
- मगध को मौखरि आधिपत्य में लाने वाला शासक सर्ववर्मा था। वह अपने वंश का सर्वाधिक शक्तिशाली शासक था, जो 586 ई. तक राज्य करता रहा।
- अवंतिवर्मा के समय में थानेश्वर के पुष्यभूतिवंश के साथ वैवाहिक संबंध स्थापित हुआ था।
- अवंतिवर्मा का पुत्र ग्रहवर्मा (600-605 ई.) शासक हुआ।
- ग्रहवर्मा का विवाह थानेश्वर नरेश प्रभाकरवर्द्धन की कन्या राज्यश्री के साथ संपन्न हुआ था।

3.2 चोल साम्राज्य
(Chola Empire)

दक्षिण में कृष्णा एवं तुंगभद्रा के दोआब से लेकर कुमारीअंतरीप तक के भू-भाग को प्राचीन काल में 'तमिल प्रदेश' कहा जाता था। नौवीं सदी के मध्य पल्लव सामंत विजयालय 'उरैयूर' (त्रिचनापल्ली) के सीमावर्ती क्षेत्र में शासन कर रहा था। उस समय पल्लवों एवं पाण्ड्यों में निरंतर संघर्ष हो रहे थे। ऐसे में पाण्ड्यों की निर्बल स्थिति का लाभ उठाकर विजयालय ने (लगभग 850 ई.) 'तंजौर' पर अधिकार कर 'चोल राज्य' की स्थापना की थी।

विजयालय (850-871 ई.)

- विजयालय ने 'नरकेसरी' की उपाधि ग्रहण की थी।
- उसने तंजौर को राजधानी बनाकर; वहाँ दुर्गा देवी के मंदिर की स्थापना करवाई थी।

आदित्य प्रथम (871-907 ई.)

- आदित्य प्रथम प्रारम्भ में पल्लव नरेश अपराजित का सामंत था तथा उसने श्रीपुरंबियम् के युद्ध में अपने स्वामी को पाण्ड्यों के विरुद्ध सहायता प्रदान की थी।
- उसने अपराजित की हत्या कर 'तोंडमडलम्' को अपने राज्य में मिला लिया और चेर वंश की राजकुमारी के साथ अपने पुत्र 'परांतक' का विवाह किया था।

परांतक प्रथम (907-955)

- **बेल्लूर का युद्ध (लगभग 930 ई.):** पाण्ड्य शासक राजसिंह द्वितीय ने सिंहल नरेश की सहायता से परांतक प्रथम के विरुद्ध आक्रमण किया। परांतक प्रथम ने दोनों की सेनाओं को सम्मिलित रूप से परास्त कर, मदुरा पर अधिकार कर 'मदुरैकोण्ड' की उपाधि ग्रहण की तथा कुमारीअंतरीप तक के संपूर्ण प्रदेश पर अधिकार कर लिया था।
- **तक्कोलम् का युद्ध (लगभग 949 ई.):** राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय ने गंग राज्य को जीतने के बाद चोल शासक 'परांतक प्रथम' को परास्त कर, 'तोंडमंडलम्' पर अधिकार कर लिया था।
- परांतक का उत्तराधिकारी मंदरादित्य (955-957 ई.) की रुचि धार्मिक कार्यों में अधिक होने के कारण चोल राज्य अत्यंत संकुचित हो गया था।
- परांतक द्वितीय (957-973 ई.) ने तोंडमंडलम् को राष्ट्रकूटों से छीन कर चोल राज्य में सम्मिलित कर लिया था।

राजराज प्रथम (985-1015 ई.)

- उसने राजमार्त्तण्ड, अरिमोलि तथा चोलेंद्र सिंह की उपाधियाँ ग्रहण की थीं।
- चोल साम्राज्य की वास्तविक सत्ता का संस्थापक परांतक द्वितीय (सुंदर चोल) का पुत्र अरिमोलिवर्मन था, जो 985 ई. में 'राजराज' की उपाधि धारण कर गद्दी पर बैठा था।
- उसने केरल के शासक रविवर्मा को त्रिवेंद्रम में पराजित कर 'कांडलूर शालैकलमरुत्त' की उपाधि ग्रहण की थी।
- तिरुवालंगाडु ताम्रपत्रों के अनुसार 'राजराज प्रथम ने पाण्ड्य शासक अमरभुजंग को परास्त कर, उसकी राजधानी 'मुदरा' को जीत लिया था।'
- राजराज प्रथम ने सिंहल द्वीप के शासक महेंद्र पंचम को पराजित किया। अनुराधापुर के स्थान पर 'पोलोन्नरुव' को अपनी राजधानी बनाया तथा उसका नाम 'जननाथमंगलम्' रखा था।
- राजराज प्रथम भगवान 'शिव' का अनन्य भक्त था। उसने अपनी राजधानी में 'राजराजेश्वर' का भव्य मंदिर बनवाया था।
- उसने 'श्री विजय' के शैलेंद्र शासक 'श्रीमार विजयोतुंगवर्मन' को नागपट्टम् में एक बौद्ध विहार बनवाने की अनुमति प्रदान की तथा बौद्ध विहार को ग्राम दान दिया था।
- राजराज प्रथम ने मैसूर के पश्चिमी गंगों को जीता तथा कर्नाटक लेख में उसे 'चोल नारायण' कहा गया। उसने नोलंबों तथा गंगों को पराजित कर गंगवाडी, तडिगैवाडि तथा नोलंबवाडी के ऊपर अधिकार कर लिया था।
- उसने कल्याणी के पश्चिमी चालुक्यों को हराकर, चोल राज्य की उत्तरी सीमा तुंगभद्रा नदी तक विस्तृत कर दी थी।
- राजराज प्रथम ने वेंगी के पूर्वी चालुक्य शासक शक्तिवर्मन को वेंगी का राजा बनाया था। इस प्रकार वेंगी उसका संरक्षित राज्य (Protectorate State) बन गया। उसने अपनी कन्या कुंदवाँ देवी का विवाह शक्तिवर्मन के छोटे भाई विमलादित्य के साथ कर दिया, जिससे दोनों के संबंध और अधिक मैत्रीपूर्ण हो गए थे। इसके बाद उसने कलिंग एवं मालद्वीप को भी जीत लिया था।

नोटः राजराज प्रथम ने अभिलेखों में 'ऐतिहासिक भूमिका/प्राक्कथन' (प्रशस्ति) की प्रथा को आरंभ किया था।

राजेंद्र प्रथम (1015-1044 ई.)

- राजेंद्र प्रथम ने उड़ीसा के कलिंग शासक (पूर्वी गंग शासक मधुकामानव) को जीता एवं बंगाल (गंगाघाटी) के शासक धर्मपाल तथा पूर्वी बंगाल के गोविंदचंद्र को हराकर, चोल साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया था। इस उपलक्ष्य में उसने 'गंगैकोंड' की उपाधि धारण की तथा 'गंगैकोंडचोलपुरम्' नामक नगर की स्थापना कर उसे राजधानी बनाया था।
- उसने श्रीलंका के शासक महेंद्र पंचम को बंदी बनाकर संपूर्ण सिंहल द्वीप पर अधिकार कर लिया था।
- उसने दक्षिण-पूर्व एशिया की विजय में श्रीविजय (शैलेंद्र) राज्य को जीता, जिसमें मलय प्रायद्वीप, जावा, सुमात्रा तथा अन्य द्वीप सम्मिलत

समाज

- चोलकालीन समाज में वर्ण व्यवस्था विद्यमान थी। हालाँकि, समाज ब्राह्मण एवं गैर-ब्राह्मण वर्गों में बँटा हुआ था।
- व्यावसायिक आधार पर वर्ग विभाजन का उल्लेख मिलता है, जिसे 'वलंगई' व 'इडंगई' कहा जाता था। 'वलंगई' ऐसा काश्तकार समुदाय था, जो सीधे तौर पर कृषि उत्पादन से जुड़ा होता था तथा 'इडंगई' सामान्यत: मज़दूर एवं शिल्पकार वर्ग के लोग थे।
- दास प्रथा का प्रचलन था, पर व्यापक तौर पर दास प्रथा प्रचलित नहीं थी।
- सती प्रथा एवं बहु विवाह प्रथा का प्रचलन था, लेकिन पर्दा प्रथा प्रचलित नहीं थी।

साहित्य

- 'चोल शासकों' की राजकीय भाषा 'तमिल' थी।
- 'जयंगोंदार' चोल शासक कुलोत्तुंग प्रथम का राजकवि था, उसने 'कलिंगत्तुपर्णि' नामक ग्रंथ की रचना की थी। इसमें कुलोत्तुंग प्रथम के कलिंग-युद्ध की घटनाओं का वर्णन है।
- 'कंबन' ने चोल शासक कुलोत्तुंग तृतीय के समय में 'तमिल रामायण' अथवा 'रामावतारम्' की रचना की थी। यह तमिल साहित्य का महाकाव्य है।
- शेक्किल्लार का पेरियपुराणम्, पुलगेंदि का नलवेंब, तिरुत्तक्देवर का 'जीवक चिंतामणि' एवं तोलामोल्लि का शूलामणि आदि तमिल ग्रंथ महत्त्वपूर्ण थे।
- चोल शासकों ने 'अमृतसागर' तथा 'बुद्धमित्र' जैसे प्रसिद्ध जैन एवं बौद्ध विद्वानों को संरक्षण प्रदान किया था। अमृतसागर ने याप्परुंगलम् तथा 'याप्परुंगलक्कारिगै' नामक दो प्रामाणिक ग्रंथ छंद शास्त्र (Prosody) पर लिखे थे।
- बुद्धमित्र कृति 'वीर-शोल्लियम्' में चोल शासक वीर राजेंद्र को महान 'तमिल विद्वान' कहा गया है।
- चोल काल में नाथमुनि, यमुनाचार्य तथा रामानुज ने संस्कृत ग्रंथों की रचना की थी।

कला और स्थापत्य

- प्रसिद्ध कलाविद् फर्ग्युसन के अनुसार "चोल कलाकारों ने 'दैत्यों' के समान कल्पना की तथा जौहरियों के समान उसे पूरा किया" (They Conceived like giants and finished like jewellers)।
- चोल काल को दक्षिण भारतीय कला का स्वर्णयुग कहा जाता है।
- चोल काल के प्रारंभिक स्मारक पुडुक्कोटटै ज़िले से प्राप्त होते हैं। जिसमें विजयालय द्वारा बनवाया गया नार्त्तामलाई का 'चोलेश्वर मंदिर' सर्वाधिक प्रसिद्ध है।
- चोल स्थापत्य का चरमोत्कर्ष त्रिचनापल्ली ज़िले में निर्मित-तंजौर एवं गंगैकोंडचोलपुरम् के मंदिरों के निर्माण में परिलक्षित होता है।
- राजराज द्वितीय द्वारा निर्मित 'दारासुरम्' का 'ऐरावतेश्वर' मंदिर अत्यंत भव्य है।
- कुलोत्तुंग तृतीय द्वारा निर्मित 'त्रिभुवनम्' का कंपेहरेश्वर मंदिर अत्यंत सुंदर है।
- त्रिचनापल्ली के 'तिरुभरंगकुलम्' से नटराज की एक विशाल कांस्य प्रतिमा मिली है, जो इस समय 'राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली' में स्थित है।
- दारासुरम् मंदिर तो मूर्तियों का विशाल संग्रह है, जहाँ नाट्यशास्त्र की समस्त मुद्राओं का अंकन किया गया है। मंदिर की चौकी पर अंकित कुछ अलंकरण इतने लोकप्रिय बने, कि उनका प्रभाव जावा स्थित बोरोबुदूर मंदिर में भी देखे जा सकते हैं।
- बृहदीश्वर मंदिर की दीवारों पर उत्कीर्ण चित्रों में शिव की विविध लीलाओं से संबंधित चित्रकारियाँ प्राप्त होती हैं। एक चित्र में राक्षस का दहन करती हुई दुर्गा देवी तथा दूसरे चित्र में राजराज को सपरिवार शिव की पूजा अर्चना करते हुए दिखाया गया है।
- चोल काल में मंदिर आर्थिक गतिविधियों के केंद्र थे। ये मंदिर बैंकिंग एवं विद्याध्ययन का भी कार्य करते थे।
- दक्षिण भारत में घटिका प्राय: मंदिरों के साथ संबद्ध विद्यालय होते थे।

बृहदीश्वर मंदिर

पूर्णत: ग्रेनाइट से निर्मित तंजौर स्थित वृहदीश्वर मंदिर राजराज प्रथम द्वारा 1010 ईस्वी में बनवाया गया था। इसे यूनेस्को ने विश्व धरोहर घोषित किया है।

इसे राजराजेश्वर मंदिर भी कहा जाता है। इसके शिखर में 13 मंज़िलें हैं। इसके गुंबद की परछाईं पृथ्वी पर नहीं पड़ती। इस मंदिर में गोपुरम, मंडप आदि निर्मित हैं।

बृहदीश्वर मंदिर

3.3 प्राचीन भारत के विविध पहलू (Various Aspects of Ancient India)

भारत का नामकरण

- भारत को अनेक नामों से पुकारा गया है। प्राचीन काल में भारत के विशाल उपमहाद्वीप को 'भारतवर्ष' के नाम से जाना जाता था। संभवतः भारत का नामकरण ऋग्वैदिक काल के प्रमुख जन 'भरत' के नाम पर किया गया था।
- भारत देश जंबूद्वीप का दक्षिणी भाग था। आर्यों का निवास स्थल होने के कारण इसका नामकरण 'आर्यावर्त्त' के रूप में हुआ।
- एक प्रदेश के रूप में भारत का प्रथम उल्लेख पाणिनी लिखित 'अष्टाध्यायी' में मिलता है।
- भारत का अंग्रेज़ी नाम 'इंडिया' की उत्पत्ति 'इंडस' (सिंधु) शब्द से हुई है, जो यूनानियों द्वारा चौथी सदी ईसा पूर्व में दिया गया था। इससे 17वीं सदी में अंग्रेज़ों ने इंडिया (भारत) नामकरण किया है।
- चीनियों ने प्रारंभ में भारत के लिये तिएन-चू अथवा चुआंतू शब्द का प्रयोग किया, लेकिन ह्वेनसांग के बाद वहाँ पर 'यिन-तू' शब्द का चलन हो गया। इत्सिंग ने भारत के लिये 'आर्य देश' और 'ब्रह्मराष्ट्र' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है।
- मध्यकालीन इतिहासकारों (फारसी और अरबी) ने इस देश को 'हिंद' अथवा 'हिंदुस्तान' शब्द से संबोधित किया था।

भारत का मध्य एशिया, दक्षिण-पूर्व एशिया, चीन, तिब्बत तथा यूरोप से संबंध

मध्य एशियाः

काशगर (शैलदेश), यारकंद (कोक्कुक), खोतान (खोतुंन), शान (शान), तुर्फान (भरुक), कुची (कूचा), करसहर (अग्निदेश) आदि राज्य मध्य एशिया के अंतर्गत आते थे। चतुर्थ सदी ईस्वी में मध्य एशिया के उत्तर में 'कूची' तथा दक्षिण में खोतान भारतीय संस्कृति के प्रमुख केंद्र थे। चीन, भारत तथा ईरान के बीच स्थित प्रदेश को मध्य एशिया अथवा चीनी तुर्किस्तान कहा गया, जो पहले काशगर से लेकर चीन की सीमा तक फैला हुआ था।

- सर्वप्रथम मौर्य सम्राट अशोक ने 'धर्म-प्रचार' को मध्य एशिया में फैलाया था।
- फाहियान के अनुसार गुप्त काल में मध्य एशिया के निवासी भारतीय भाषा का अध्ययन करते थे।
- मध्य एशिया से प्राप्त भारतीय ग्रंथों में- धम्मपद, उदानवर्ग, सारिपुत्तप्रकरण आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।
- मध्य एशिया के दक्षिणी क्षेत्र में स्थित खोतान का राज्य भारतीय संस्कृति का प्रमुख केंद्र था। बौद्ध परंपरा के अनुसार अशोक के पुत्र कुणाल ने खोतान में हिंदू-राज्य की स्थापना की थी।
- फाहियान के अनुसार खोतान में 'वैरोचन' नामक आचार्य ने बौद्ध धर्म का प्रचार किया था।
  - ◆ खोतान का 'गोमती विहार' बौद्ध शिक्षा का प्रमुख केंद्र था जहाँ 3000 भिक्षु निवास करते थे।
- लगभग 433 ई. में 'धर्मक्षेम' नामक चीनी बौद्ध विद्वान 'महापरिनिर्वाणसूत्र' की पाण्डुलिपि की खोज में खोतान आया था।
- कूची के प्राचीन शासकों में जैसे- सुवर्णपुष्प, हरिपुष्प, हरदेव तथा सुवर्ण देव ने भारतीय नाम धारण किये थे।
- 'कुमारायण' ने 'कूची' की कन्या 'जीवा' से विवाह कर 'कुमारजीव' को जन्म दिया और कालांतर में यही 'कुमारजीव' भारत, मध्य एशिया तथा चीन में बौद्ध विद्वान के रूप में प्रसिद्ध हुए।

दक्षिण-पूर्व एशियाः

दक्षिण-पूर्व एशिया के अंतर्गत बर्मा (म्याँमार), मलेशिया, इंडोनेशिया, स्याम (थाईलैंड), कंबोडिया, लाओस, वियतनाम और फिलीपींस के राज्य थे। यहाँ भारतीय उपनिवेश स्थापित किये गए तथा शैव, वैष्णव और बौद्ध धर्मों का प्रचार-प्रसार किया गया। प्राचीन भारतवासी इस संपूर्ण क्षेत्र को 'सुवर्णभूमि' तथा 'सुवर्णद्वीप' (पेरीप्लस तथा टॉलमी ने इसे 'छैरसे' उल्लिखित किया) नाम से जानते थे।

- ताम्रलिप्ति तथा फ्लोर उस काल के बंदरगाह थे- यहाँ से जल मार्ग द्वारा व्यापारिक जहाज़ बंगाल की खाड़ी को पार करते हुए, मलाया एवं पूर्वी द्वीपों तक जाते थे।
- रामायण में 'यवद्वीप' (जावा और सुमात्रा) का उल्लेख है, जहाँ सोने की खानें थीं।
- दूसरी तथा तीसरी शताब्दी ई. में चम्पा में हिंदू राज्य की स्थापना की गई थी। यहाँ के आरंभिक शासकों में 'भद्रवर्मन' प्रसिद्ध था। उसने अपने राज्य का विभाजन-अमरावती (उत्तरी प्रांत), विजय (मध्यवर्ती) तथा पांडुरंग (दक्षिणी) प्रांतों में किया था। भृगुवंश के श्री जय इंद्रवर्मन् ने 'महाराजाधिराज' की उपाधि धारण की थी।
- कंबोडिया (कंबुज) का 'अंकोरवाट' मंदिर भगवान विष्णु को समर्पित है।
- जावा (यवद्वीप) का 'बोरोबुदूर बौद्ध-स्तूप' (शैलेंद्र वंशीय शासकों द्वारा निर्मित) अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्मारक है।
- मलय प्रायद्वीप का 'तक्कोल' प्रमुख भारतीय व्यापारिक स्थल था।
- सुमात्रा में प्राचीन हिन्दू-राज्य 'श्रीविजय' था।
- सातवीं सदी में बर्मा का 'द्वारावती' प्रमुख हिंदू राज्य था।

नोटः दक्षिण पूर्व एशिया के राज्यों के अभिलेखों (संस्कृत) में भारतीय संवत् 'शक संवत्' का उल्लेख है।

चीनः

- 'महाभारत' तथा 'मनुस्मृति' में चीन संबंधों की चर्चा मिलती है।
- कौटिल्य के अर्थशास्त्र में 'चीनी सिल्क' का विवरण प्राप्त होता है।
- कालिदास ने भी 'चीनी रेशमी वस्त्र' (चीनांशुक) का उल्लेख किया है।

3.4 प्राचीन भारत में शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा स्थापत्य कला (Education, Science & Technology and Sculpture Art in Ancient India)

शिक्षा (Education)

भारतीय शिक्षा के संदर्भ में 'ए.एस. अल्टेकर' के शब्दों में– "प्राचीन भारतीय सभ्यता विश्व की सर्वाधिक रोचक एवं महत्त्वपूर्ण सभ्यताओं में से एक है। इस सभ्यता के समुचित ज्ञान के लिये हमें इसकी शिक्षा पद्धति का अध्ययन करना आवश्यक है जिसने इस सभ्यता को चार हज़ार वर्षों से भी अधिक समय तक सुरक्षित रखा, उसका प्रचार-प्रसार किया तथा उसमें संशोधन किया।" महाभारत में शिक्षा के महत्त्व का वर्णन इस प्रकार किया गया है– "नास्ति विद्यासमं चक्षुर्नास्ति सत्यसमं तप:", "सा विद्या या विमुक्ते" अर्थात् 'विद्या के समान 'नेत्र' तथा सत्य के समान 'तप' कोई दूसरा नहीं है, इसे भारतीय संस्कृति में मोक्ष का साधन माना गया है। चूँकि भारतीय मनीषी भौतिकता के साथ-साथ आध्यात्मिकता पर अत्यधिक ज़ोर देते रहे हैं।

प्राचीन भारतीय साहित्य तथा विदेशी यात्रियों के विवरण से पता चलता है कि यहाँ शिक्षा के पाठ्यक्रम में- 4 वेद, 6 वेदांग, 14 विधाएँ, 18 शिल्प तथा 64 कलाएँ आदि सम्मिलित थे।

प्राचीन विश्वविद्यालय

तक्षशिला विश्वविद्यालय

- वर्तमान पाकिस्तान के रावलपिण्डी ज़िले में स्थित तक्षशिला प्राचीन समय में गांधार राज्य की राजधानी थी। महाभारत के अनुसार राजा परीक्षित के पुत्र जनमेजय ने इसे जीता तथा यहीं प्रसिद्ध 'नागयज्ञ' का आयोजन किया था।
- तक्षशिला दुनिया का प्रथम विश्वविद्यालय था।
- तक्षशिला में कोशल के राजा प्रसेनजित, मगध का राजवैद्य जीवक, महाकूटनीतिज्ञ चाणक्य, बौद्ध विद्वान वसुबंध आदि ने शिक्षा ग्रहण की थी।
- 1912 से 1929 तक जॉन मार्शल के निर्देशन में यहाँ खुदाई करवाई गई थी। यहाँ से तीन प्राचीन बस्तियों के साक्ष्य मिलते हैं, जो 'भीर का टीला', 'सिरकप' तथा 'सिरसुख' हैं।
- तक्षशिला विश्वविद्यालय आयुर्वेद (औषधि शास्त्र) के अध्ययन के लिये अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त था। 'राजनीति' और 'शस्त्रविद्या' की शिक्षा का प्रमुख केंद्र भी था।

नालंदा विश्वविद्यालय

- प्राचीन भारत के शिक्षा केंद्रों में नालंदा विश्वविद्यालय का नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय है। इसकी स्थापना गुप्त शासक कुमारगुप्त प्रथम (415-455 ई.) ने की थी।
- इस विश्वविद्यालय में 8 बड़े कमरे तथा व्याख्यान के लिये 300 छोटे कमरे बने हुए थे। यहाँ भारत के अतिरिक्त चीन, मंगोलिया, तिब्बत, कोरिया, मध्य एशिया आदि देशों से भी विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। नालंदा महायान बौद्ध धर्म की शिक्षा का प्रमुख केंद्र था।
- यहाँ लगभग 10,000 विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिये करीब 2000 शिक्षक थे।
- ह्वेनसांग ने यहाँ 18 महीने तक रहकर अध्ययन किया था। ह्वेनसांग के समय इस विश्वविद्यालय के कुलपति शीलभद्र थे।
- इत्सिंग ने यहाँ रहकर 400 संस्कृत ग्रंथों की प्रतिलिपियाँ तैयार की थीं। यहाँ का 'धर्मग्ग-धर्मग्गज' नामक पुस्तकालय तीन भव्य भवनों-रत्नासागर, रत्नोद्धि तथा रत्नरंजक में स्थित था।
- वर्तमान में नालंदा विश्वविद्यालय, बिहार की राजधानी पटना से लगभग 90 किमी. दूर नालंदा ज़िले के राजगीर नामक स्थान पर स्थित है।
- यहाँ बौद्ध धर्म के अतिरिक्त वेद, योगशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, तंत्रविद्या, हेतुविद्या, सांख्य दर्शन के ग्रंथों की शिक्षा भी व्याख्यानों के माध्यम से प्रदान की जाती थी। यहाँ अध्ययन-अध्यापन का स्तर अत्यंत उच्च कोटि का था।
- शीलभद्र के अतिरिक्त धर्मपाल (शीलभद्र के गुरु), चंद्रपाल, गुणमति, स्थिरमति, प्रभामित्र, जिनमित्र और ज्ञानचंद्र आदि विद्वान भी उल्लेखनीय हैं।
- हर्ष के पश्चात् इस विश्वविद्यालय की ख्याति लगभग बारहवीं शताब्दी तक बनी रही। नौवीं शताब्दी में इसकी अंतर्राष्ट्रीय ख्याति से प्रभावित होकर जावा एवं सुमात्रा के शासक बालपुत्रदेव ने नालंदा में एक मठ का निर्माण करवाया और पालशासक देवपाल से पाँच गाँव दान में दिलवाया। 12वीं शताब्दी के अंत में मुस्लिम आक्रमणकारी बख्तियार खिलजी ने इस विश्वविद्यालय को नष्ट कर दिया।
- नालंदा के विद्वानों ने तिब्बत में बौद्धधर्म एवं भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया। बौद्ध प्रचारकों में सर्वप्रथम चंद्रगोमिन् का नाम आता है। इसके अतिरिक्त आठवीं शताब्दी के मध्य में बौद्ध विद्वान शांतिरक्षित तिब्बत नरेश के निमंत्रण पर वहाँ गए और बौद्धधर्म का उपदेश दिया। उन्हीं के निर्देशन में प्रथम तिब्बती बौद्ध मठ निर्मित हुआ।

वल्लभी विश्वविद्यालय

- वल्लभी पश्चिम भारत में शिक्षा तथा संस्कृति का प्रसिद्ध केंद्र था। यह हीनयान बौद्ध धर्म की शिक्षा का प्रमुख केंद्र था।
- इत्सिंग के अनुसार, सभी देशों के विद्वान यहाँ एकत्र होते थे तथा विविध सिद्धांतों पर शास्त्रार्थ करके उनकी सत्यता निर्धारित किया करते थे।

3.5 व्यापार एवं शहरीकरणः उत्तर भारत, 650–1300 ईस्वी
(Trade & Urbanization: North India, 650-1300 A D)

स्रोत

- इस काल के अध्यनार्थ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत सामग्री है– विशाल संख्या में प्राप्त अभिलेख। अभिलेख तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व ही दृष्टिगोचर हो चुके थे। परंतु चौथी शताब्दी के बाद के अधिकांश अभिलेख ताम्रपत्रों (ताम्रशासन/ताम्रपत्र) की श्रेणी में ही आते हैं।
- इन ताम्रपत्रों में अनुदान पाने वालों को शाही आदेशों द्वारा राजस्व-मुक्त भू-सम्पदा का हस्तांतरण किये जाने के लिये लिपिबद्ध किया गया।
- यद्यपि यह प्रथा संभवतः सबसे पहले दक्खन में दूसरी शताब्दी ईस्वी के आस-पास नज़र आई। भू-अनुदान प्रदान किये जाने की प्रथा पूरी तरह से चौथी शताब्दी से ही स्थापित हुई और 600 ईस्वी के पश्चात् उसने एक अखिल-भारतीय आयाम ले लिया।
- अधिकांश ताम्रपत्रों में किसी ब्राह्मण, किसी ब्राह्मण समूह अथवा किसी धार्मिक संस्था (बौद्धमठ, ब्राह्मणवादी मंदिर अथवा कोई मठ अथवा कोई जैन प्रतिष्ठान) को उपहार में दिये गए राजस्व-मुक्त अनुदान लिपिबद्ध हैं। प्राप्तकर्त्ताओं को दिये गए ऐसे धार्मिक अनुदान को अग्रहार कहा जाता है।
- ताम्रपत्र चूँकि भू-सम्पदा के अनुदान संबंधी राजकीय अभिलेख हैं, वे "ग्रामीण अर्थव्यवस्था को समझने के लिये अमूल्य हैं, विशेष रूप से भू-सम्पदा की हस्तांतरण प्रक्रिया, ग्रामीण आवास-पैटर्न, फसलों, सिंचाई परियोजनाओं, कृषकों एवं कृषि-राजस्व मांग को समझने के लिये।
- परंतु कभी-कभार ये अनुदान उन महत्त्वपूर्ण व्यापारियों एवं शिल्पियों पर भी प्रकाश डालते हैं जिनकी विद्यमानता भू-अनुदान संबंधी धार्मिक कार्य के महत्त्वपूर्ण गवाहों के रूप में लिपिबद्ध थी।
- ऐसे अनुदानों में स्वाभाविक रूप से न सिर्फ व्यापारी दृष्टिगोचर होते हैं, बल्कि विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का वर्णन भी मिलता है।
- ये अभिलेख हमें विभिन्न प्रकार के बाज़ारों की भी जानकारी देते हैं, जिनमें से कुछ से महसूल और सीमाकर (शुल्क) वसूल किये जाते थे, इससे व्यापार की राजस्व संभावना से संबंध के संकेत मिलते हैं।
- व्यापार एवं शहरी केंद्रों संबंधी जानकारी विस्तृत विधि-संहिताओं अथवा सैद्धांतिक ग्रंथों (शास्त्रों/धर्म शास्त्रों) से मिलती है। विष्णु, वशिष्ठ, बृहस्पति एवं नारद कृत संहिताएँ हमारे प्रयोजनार्थ उपयोगी होंगी।
- इन संहिताओं पर टिप्पणियाँ (उदाहरणार्थ, मनुस्मृति एवं याज्ञवल्क्यस्मृति पर टिप्पणियाँ) भी इस विषय पर कुछ उपयोगी जानकारी प्रस्तुत करती हैं।
- कुछ महत्त्वपूर्ण जानकारी अमरसिंह (पाँचवीं-छठी शताब्दी ईस्वी) के प्रसिद्ध शब्दकोश अमरकोश, अभिज्ञानचिंतामणि और हेमचन्द्र (ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी ईस्वी) की देशीनाममाला तथा लेखापद्धति जैसी तकनीकी संहिताओं से प्राप्त की जा सकती है।
- वाणिज्यिक कार्यकलापों संबंधी कुछ जानकारी विशाल रचनात्मक साहित्य में भी उपलब्ध हैं, उदाहरण के लिये कालिदास की कृतियों, शूद्रक के मृच्छकटिकम्, दंडिन के दशकुमारचरित एवं विभिन्न प्रकार के जैन ग्रंथ।
- इस तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है कि दो सुप्रसिद्ध जैन ग्रंथ जगदुचरित्र एवं वस्तुपालमहात्म्यम् पूर्व मध्यकालीन गुजरात के दो प्रमुख व्यापारियों की जीवनियाँ हैं।
- व्यापार, विशेष रूप से भारत के विदेश व्यापार के इतिहास हेतु स्रोत के रूप में विदेशी साहित्यिक स्रोतों का विशेष महत्त्व है। फाहियान (पाँचवी शताब्दी ईस्वी का पूर्वाद्ध) ह्वेनसाँग (सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध), इत्सिंग (सातवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध) और चाऊ जु कुआ (1223 ई.) के चीनी विवरण भारत में व्यापार को समझने के लिये अमूल्य हैं।
- भारत में अरबी और फारसी के भौगोलिक और यात्रा संस्मरण– सुलेमान (लगभग 851 ई.), इब्न खुर्दाद बिह (882 ई.) अल-मसूदी (915 ई.), बुजुर्ग इब्न शहरियार (995 ई.), हुदूद-अल आदम का बेनाम लेखक (982 ई.), अल-बरुनी (973-1048 ई.) और अल-इदरीसी (1162 ई.) भारतीय उत्पादक वस्तुओं एवं पश्चिम एशिया के साथ भारत के व्यापारिक संबंधों के विषय में जानकारी से भरपूर हैं।
- इन विवरणों में सीरिया के ईसाई भिक्षु कॉस्मस इंडिकोप्ल्यूस्ट्स के छठी शताब्दी ईस्वी के उत्तरार्द्ध में लिखे विवरणों और वेनिस यात्री मार्कोपोलो (तेरहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध) के भारत संबंधी प्रसिद्ध विवरणों को जोड़ा जा सकता है।
- एक असाधारण प्रकार का स्रोत है, मध्यकालीन यहूदी व्यापारियों के पत्र, जो भारत के पश्चिमी तट और लाल सागर के बीच नियमित रूप से व्यापार करते थे। यद्यपि उनके सम्पर्कों के मुख्य बिंदु कर्नाटक एवं मालाबार तट थे, इन अनुपम व्यापारिक पत्रों में लम्बी दूरी के व्यापार में वास्तविक भागीदारों के अनुभवों को लिपिबद्ध किया गया है। ये गुजरात तट पर व्यापार संबंधी महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रस्तुत करते हैं।
- प्रारंभिक ऐतिहासिक बस्तियों से भिन्न, प्रारंभिक मध्यकालीन बस्तियों का योजनाबद्ध रूप से अन्वेषण एवं उत्खनन नहीं किया गया है और इसी कारण व्यापार एवं शहरीकरण संबंधी पुरातत्त्वीय आँकड़े नितांत अपर्याप्त हैं।
- मुद्रा-संबंधी स्रोत-प्रारंभिक ऐतिहासिक सिक्कों द्वारा प्रस्तुत आँकड़ों की तुलना में इस काल में कम आँकड़े पेश करते हैं। खासकर 600-1000 ई. की कालवधि में। उत्कृष्ट सिक्कों की ढलाई उत्तर भारत में कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित थी; 1000 ई. के बाद ही कीमती धातुओं के सिक्कों की ढलाई पुनः प्रारम्भ हुई।

3.6 अरब एवं तुर्कों का आक्रमण
(Invasion of the Arabs & Turks)

विश्व इतिहास में इस्लाम धर्म का उत्थान और भारतीय इतिहास के परिदृश्य में अरबों एवं तुर्कों की आक्रमणकारी प्रवृत्तियों से एक युगांतरकारी घटना का आविर्भाव हुआ, जिसके परिणामस्वरूप भारत में मुस्लिम सत्ता का सूत्रपात हुआ। भारत में इससे पूर्व गुप्त साम्राज्य के नष्ट हो जाने के पश्चात् सम्राट हर्षवर्धन ने समस्त उत्तर भारत को राजनीतिक एकता एवं शासन व्यवस्था में संजोए रखा था। हर्ष की मृत्यु के पश्चात् उत्तर एवं दक्षिण भारत में शक्तिशाली क्षेत्रीय एवं राजपूत राजवंश कायम हुए, जो आपसी प्रतिस्पर्धा एवं वैमनष्यता की स्थिति से एक-दूसरे को हमेशा युद्ध की स्थिति में बनाए रखते थे। यही भारत की राजनीतिक दुर्बलता का मुख्य कारण था।

चूँकि 712 ई. में अरबों के द्वारा सिंध पर अधिकार किये जाने के साथ-साथ व्यापारिक गतिविधियों को भी मज़बूती मिली, जिससे अरबों ने मध्य एशिया की राजनीतिक स्थिति को प्रभावित कर दिया था। मुल्तान (स्वर्ण नगर) की समृद्धि का समाचार, जब तुर्क जनजाति को मिला, तो वे भारत की तरफ अग्रसर हुए और कालांतर में उन्होंने भारत में मुस्लिम सत्ता की स्थापना की।

इस्लाम धर्म का उद्भव

अरब के रेगिस्तान में इस्लाम की उत्पत्ति हुई तथा अरबों, ईरानियों और तुर्कों ने इसके प्रसार में प्रमुख भाग लिया था। अरब तीनों ओर समुद्र से घिरा हुआ है। इसके पूरब में फारस की खाड़ी, दक्षिण में हिंद महासागर, उत्तर में सीरिया एवं इराक और पश्चिम में लाल सागर हैं। यहाँ के निवासी इसे 'जजिरात-अल-अरब' कहते हैं। पैगम्बर मुहम्मद (570-632 ई.) इसके संस्थापक थे। इस्लाम अरबी भाषा का शब्द है, इसका अर्थ- 'अल्लाह के प्रति पूर्ण आत्मसमर्पण' से है। इस्लाम धर्म के उदय से पूर्व अरबवासी मूर्ति पूजक थे। मुहम्मद इन्हीं कबीलों के कुरैश कबीले से संबंधित थे। इनकी धार्मिक पुस्तक 'कुरान' है। इसमें पाँच बातों पर ज़ोर दिया गया- कलमा, नमाज, जकात, रमजान (रोजा) तथा हज।

पैगम्बर मुहम्मद साहब (570-632 ई.)

- 8 जून, 570 ई. इस्लाम धर्म के संस्थापक हज़रत मुहम्मद का जन्म मक्का (अरब) में हुआ था। इनके पिता का नाम 'अब्दुल्लाह' एवं माता का नाम बीबी 'आमिनाह' था। मुहम्मद का अर्थ है- 'जिसकी अत्यंत प्रशंसा की गई हो'।
- प्रारंभ में अरबवासी अल्लाह को मानते हुए 300 अन्य देवी-देवताओं की भी पूजा करते थे, जिनकी मूर्तियाँ एवं चिह्न काबा में रखे गए थे। जिनमें केवल 'हाबल' की एक मूर्ति पूर्ण थी। लाट, मानत एवं उजा की पूजा अल्लाह की बेटियों के रूप में की जाती थी। उस समय तक अरबों का न तो कोई धर्म ग्रंथ और न कोई धार्मिक दर्शन था।
- 622 ई. में मुहम्मद साहब मक्का छोड़कर मदीना चले गए। इस यात्रा को 'हिजरत' कहा जाता है, जिसे 'हिजरी संवत्' के नाम से भी जाना जाता है।
- 632 ई. में मुहम्मद साहब की मृत्यु हो गई। पैगम्बर मुहम्मद के उत्तराधिकारी ख़लीफ़ा कहलाए। ख़लीफ़ा का अर्थ- 'धार्मिक एवं राजनीतिक' प्रमुख है।
- इस्लाम के प्रमुख ख़लीफ़ाओं के नाम- अबू-वक्र (प्रथम ख़लीफ़ा उमय्यद वंश), उमर (आदर्श ख़लीफ़ा), उसमान (अयोग्य ख़लीफ़ा) एवं अली (संपूर्ण जीवन युद्धों में व्यतीत) तथा पाँचवें ख़लीफ़ा मुअव्विया हुए, जिन्होंनें ख़लीफ़ा के पद को पैतृक रूप प्रदान किया।
- ख़लीफ़ा उमर ने 'अमीर-उल-मुर्मीनिन' की उपाधि धारण कर, अरब में अन्य धर्मों को मानने वालों को अलग बसाया और अरब को पूर्णतः इस्लाम का प्रदेश बना दिया था।
- अब्बासियों का पहला ख़लीफ़ा 'अबुल अब्बास' था। उसने उमय्यद-वंश के सभी व्यक्तियों का कत्ल करा दिया था।
- अब्बासी-ख़लीफ़ाओं में प्रथम 8 ख़लीफ़ा प्रमुख थे। इस वंश में कुल 37 ख़लीफ़ा हुए थे। जिन्होंने लगभग 500 वर्षों तक शासन किया।
- इस्लाम में ख़लीफ़ाओं की सत्ता का अंत प्रथम विश्वयुद्ध में ब्रिटिश सरकार द्वारा किया गया था।

सिंध

- आठवीं सदी में सिंध एक अत्यंत विस्तृत राज्य था जो उत्तर में कश्मीर से लेकर दक्षिण में अरब सागर तक, पूर्व में कन्नौज से पश्चिम में मकरान तट तक विस्तृत था। इसकी राजधानी एलोर थी।
- सिंध में रायवंश का शासन था।
- ह्वेनसांग के अनुसार 'सिंध का शासक शूद्र था।'
- हर्ष ने सिंध पर विजय प्राप्त की थी, लेकिन उसकी मृत्यु के उपरांत सिंध स्वतंत्र हो गया था।
- रायवंश का अंतिम शासक राय साहसी द्वितीय था। ब्राह्मण मंत्री चाच ने उसके उपरांत, उसके राज्य पर अधिकार करके ब्राह्मण वंश की नींव रखी थी।
- चाचा की मृत्यु के पश्चात् उसका भाई चंदर राजा बना। चंदर के पुत्र दुराज एवं दाहिर के बीच उत्तराधिकार का युद्ध हुआ, जिसमें दुराज पराजित हुआ तथा दाहिर की विजय हुई। अंततः राजा दाहिर सिंध का एक शक्तिशाली शासक सिद्ध हुआ। उसी के समय में सिंध पर अरबों के आक्रमण हुए।

इकाई IV

- **मध्यकालीन भारतीय इतिहास के स्रोत :** पुरातत्त्वीय, पुरालेखीय और मुद्रा शास्त्रीय स्रोत, भौतिक साक्ष्य और स्मारक; इतिवृत्त; साहित्यिक स्रोत - फारसी, संस्कृत और क्षेत्रीय भाषाएँ, दफ्तर खाना : फरमान, बहियाँ/पोथियाँ/अख़बारात; विदेशी यात्रियों के वृत्तांत - फारसी और अरबी।
- **राजनीतिक घटनाएँ :** दिल्ली सल्तनत—गोरी, तुर्क, खिलजी, तुगलक, सैय्यद और लोदी। दिल्ली सल्तनत का ह्रास।
- **मुगल साम्राज्य की नींव :** बाबर, हुमायूँ और सूर वंश; अकबर से औरंगजेब तक प्रसार और सुदृढ़ीकरण। मुगल साम्राज्य का पतन।
- उत्तर कालीन मुगल शासक और मुगल साम्राज्य का विघटन।
- **विजयनगर और बहमनी :** दक्षिण सल्तनत; बीजापुर, गोलकुंडा, बिदर, बेरार और अहमदनगर – उत्थान, प्रसार और विघटन; पूर्वी गंग और सूर्यवंशी गजपति।
- मराठों का उत्थान और शिवाजी द्वारा स्वराज की स्थापना; पेशवाओं के अधीन उसका विस्तार; मुगल-मराठों के संबंध, मराठा राज्यसंघ, पतन के कारण।

4.1 मध्यकालीन भारतीय इतिहास के स्रोत
(Sources of Medieval Indian History)

मध्यकालीन भारत के इतिहास के अध्ययन के लिये मौलिक स्रोत साहित्यिक स्रोत ही हैं। वस्तुत: प्राचीन काल में भारत में क्रमबद्ध इतिहास लेखन की परंपरा विकसित नहीं थी (राजतरंगिणी अपवाद)। भारत में इसे विकसित करने का श्रेय तुर्कों एवं मुगलों को प्राप्त है। इस्लामी परंपरा में **'अन्साब'** (वंशावलियाँ लिखने की परंपरा), **सीरत** (हज़रत मुहम्मद की जीवनियों का संकलन), **मगाजी** (युद्ध वृत्तांत), **तबकात** (सामान्य इतिहास से संबंधित) तथा **मनाकिब एवं फजायल** (प्रशस्तियों एवं कसीदों का वर्णन) आदि इतिहास लेखन के सहित्यिक साक्ष्य हैं।

साहित्यिक स्रोतों के अतिरिक्त मध्यकालीन विदेशी यात्रियों के यात्रा वृत्तांत तथा पुरातात्त्विक साक्ष्यों में स्मारक, भवन एवं स्तंभलेख आदि ऐतिहासिक स्रोतों से भी पर्याप्त जानकारी मिलती है।

पूर्व मध्यकालीन साहित्यिक स्रोत

अखबार-अल-सिंद-वल-हिंद

- इसमें सुलेमानी द्वारा 9वीं सदी में, त्रिपक्षीय संघर्ष (पाल, प्रतिहार, राष्ट्रकूट) का वर्णन किया गया है।

मरूज-अज-जहब

- इसकी रचना 956 ई. में अलमसूदी द्वारा की गई। इसमें तत्कालीन शासक वर्ग के रहन-सहन आदि का वर्णन किया गया है। इसमें गुर्जर-प्रतिहार को 'अल-गुर्जर' तथा राजा को 'बौरा' कहा गया है।

किताबुल-मसालिक-वल-ममालिक

- इब्न खुर्दाब द्वारा लिखित इस ग्रंथ में तत्कालीन भारतीय समाज का वर्णन मिलता है। इसमें क्षत्रियों की दो श्रेणियों सवूकफूरिया (राजवंशीय सामंत) और कतरिया (साधारण क्षत्रिय) का वर्णन मिलता है।

अन्य रचनाएँ

रचना	लेखक
फुतुह-अल-बुल्दान	अल-बिलादुरी
गौड़वहो	वाक्पति
पृथ्वीराज विजय	जयनक
विक्रमादित्य चरित	बिल्हण
राजतरंगिणी	कल्हण
तारीख-ए-सिंध	मीर मोहम्मद मासूम
तारीख-ए-मसूदी	बैहाकी
रामचरित	संध्याकर नन्दी
नवसाहसांक चरित	पद्मगुप्त
किताबुल यामनी	उत्बी
सियासतनामा	निजाम-उल-मुल्क तूसी

सल्तनतकालीन प्रमुख ऐतिहासिक स्रोत

तुर्क-अफगान शासक मूलत: सैनिक थे और स्वयं शिक्षित नहीं थे। हालाँकि उन्होंने इस्लामी विधाओं और कलाओं को प्रोत्साहन दिया। प्रत्येक सुल्तान के दरबार में फारसी लेखकों, विद्वानों तथा कवियों का जमावड़ा लगा रहता था। उनकी रचनाओं से उस काल के इतिहास की महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ मिलती हैं।

साहित्यिक साक्ष्य: सल्तनतकाल के अनेक साहित्यिक साक्ष्य उपलब्ध हैं, जिससे सल्तनतकालीन इतिहास की पर्याप्त जानकारी मिलती है। इनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है:

चचनामा

- यह मूलत: अरबी भाषा में लिखी गई तथा लेखक का नाम अज्ञात है। मुहम्मद अली-बिन-अबूबकर कुफी ने नासिरूद्दीन कुबाचा के समय में इसका फारसी में अनुवाद किया था।
- 'चचनामा' अरबों की सिंध-विजय की जानकारी का मूल स्रोत है।
- इससे मुहम्मद-बिन-कासिम के अभियान एवं उसके शासन प्रबंध की जानकारी मिलती है।

तारीख-उल-हिंद या तहक़ीक-ए-हिंद

- इस पुस्तक की रचना अलबरूनी द्वारा की गई। वह महमूद गज़नवी के आक्रमण के समय भारत आया था। वह अरबी और फारसी भाषा का ज्ञाता था। सर्वप्रथम 1888 ई. में सचाऊ ने इसका अंग्रेज़ी भाषा में अनुवाद किया था।
- अलबरूनी ने अपनी पुस्तक में 11वीं शताब्दी के प्रारंभ में हिंदुओं के साहित्य, विज्ञान तथा धर्म का आँखों देखा सजीव वर्णन किया है। इसके अध्ययन से तात्कालिक सामाजिक दशा का पर्याप्त ज्ञान होता है। यह पुस्तक 'किताब-उल-हिंद' के नाम से भी प्रसिद्ध है।
- अलबरूनी पुराणों का अध्ययन करने वाला प्रथम मुसलमान था। वह 'श्रीमद्भगवतगीता' से विशेष रूप से प्रभावित था।
- अलबरूनी के अनुसार, "भारतीयों में यह विश्वास था कि उनके जैसा न कोई देश, न कोई राजा और न कोई ज्ञान-विज्ञान है।"
- अलबरूनी ने विधवा प्रथा एवं 8 प्रकार के अंत्यजों (चंडालों) का उल्लेख किया है।

4.2 मध्यकालीन राजनीति
[Medieval Politics]

दिल्ली सल्तनत (1206–1526 ई.)
[Delhi Sultanate (1206-1526 AD.)]

तुर्कों के भारत पर आक्रमण की सफलता का मुख्य परिणाम दिल्ली सल्तनत की स्थापना होना था। वस्तुत: दिल्ली सल्तनत की नींव तो महमूद गजनवी के सफल आक्रमणों और मुल्तान तथा पंजाब पर अधिकार किये जाने से ही तैयार हो गई थी। मुहम्मद गोरी ने इसी गजनवी वंश के अंतिम शासक खुसरव को पराजित कर पंजाब पर अधिकार किया और उसे भारत पर अपने आक्रमण का आधार बनाया। मुहम्मद गोरी ने भारत के एक बड़े भाग पर आक्रमण कर उसे अपने अधीन किया। गोरी की मृत्यु के पश्चात् उसके गुलाम और सूबेदार कुतुबुद्दीन ऐबक ने भारत में तुर्की शासन की स्थापना की जिसे 'दिल्ली सल्तनत' के रूप में जाना गया। कुतुबुद्दीन ऐबक ने दिल्ली सल्तनत के निर्माण का कार्य प्रारंभ किया। उसने इसे मध्य एशिया की राजनीति से पृथक और गजनी के शासकों के कानूनी आधिपत्य से मुक्त कर एक स्वतंत्र राज्य बनाया। दिल्ली सल्तनत के अधीन 1206 ई. से 1526 ई. के मध्य विभिन्न वंश के शासकों ने शासन किया।

दिल्ली सल्तनत

- ममलूक/दास वंश → (1206-90 ई.)
- ख़िलजी वंश → (1290-1320 ई.)
- तुगलक वंश → (1320-1413 ई.)
- सैय्यद वंश → (1414-1451 ई.)
- लोदी वंश → (1451-1526 ई.)

ममलूक वंश (1206–1290 ई.)
Mamluk Dynasty (1206-1290 AD.)

दिल्ली सल्तनत की स्थापना 1206 ई. में कुतुबुद्दीन ऐबक ने की थी। कुतुबुद्दीन ऐबक मुहम्मद गोरी का तुर्की दास था।, जिसने 'दास वंश' या 'ममलूक वंश' की नींव रखी। 'दास' शब्द का अभिप्राय 'जन्मजात दास' माना जाता तथा 'ममलूक' शब्द का अभिप्राय 'स्वंतत्र माता-पिता की संतान' था। कुतुबुद्दीन ऐबक ने 'कुतबी', इल्तुतमिश ने 'शम्सी' और बलबन ने बलबनी राजवंश की स्थापना की थी। इनमें से प्रत्येक स्वतंत्र माता-पिता की संतान थी। इतिहासकार हबीबुल्लाह ने इन सुल्तानों को गुलाम वंश के सुल्तान कहने के स्थान पर 'ममलूक वंश' के सुल्तान कहा है, जो तर्कसंगत लगता है।

मुहम्मद गोरी के उत्तराधिकारी
[गुलाम/ममलूक वंश-(1206-90 ई.)]

- कुत्बी (1206-11 ई.)
  - कुतुबुद्दीन ऐबक (1206-10 ई.)
  - आरामशाह (1210-11 ई.)
- शम्सी (1211-66 ई.)
  - इल्तुतमिश (1211-36 ई.)
    - रुकुनुद्दीन फिरोज़शाह (1236 ई.)
    - रजिया (1236-40 ई.)
    - मुइज़ुद्दीन बहरामशाह (1240-42 ई.)
    - अलाउद्दीन महमूदशाह (1242-46 ई.)
    - नासिरुद्दीन महमूद (1246-66 ई.)
- बलबनी (1266-90 ई.)
  - बलबन (1266-97 ई.)
    - पुत्र
      - शहजादा मुहम्मद → कैखुसरो
      - बुगरा खां → कैकूबाद → क्यूमर्स

[कैखुसरो, कैकूबाद, क्यूर्मस (1287-90 ई.)]

कुतुबुद्दीन ऐबक (1206-1210 ई.)

- ऐबक को बचपन में निशापुर के काजी फखरुद्दीन-अब्दुल-अजीज-कूकी ने दास के रूप में खरीदा था। कुछ समय पश्चात् वह मुहम्मद गोरी की सेवा में आ गया।
- ऐबक को अपनी योग्यता के कारण शीघ्र ही अमीर-ए-आखूर (अश्वशाला का प्रधान) का पद प्राप्त हुआ।
- तराइन के द्वितीय युद्ध (1192 ई.) के अवसर पर वह गोरी के साथ था। युद्ध के पश्चात् गोरी ने ऐबक को मुख्य भारतीय प्रदेशों का सूबेदार नियुक्त किया था। गोरी की मृत्यु के अवसर पर वह दिल्ली, लाहौर और उसके अधीन भारतीय प्रदेशों का सूबेदार था।
- इसके दरबार में हसन निजामी और फख्र-ए-मुदब्बिर जैसे विद्वान थे।
- मुहम्मद गोरी की मृत्यु के पश्चात् ऐबक को सिंध और मुल्तान को छोड़कर उत्तर भारत का संपूर्ण क्षेत्र [सियालकोट, लाहौर, अजमेर, झाँसी, दिल्ली, मेरठ, कोल (अलीगढ़), कन्नौज, बनारस, बिहार तथा लखनौती] प्राप्त हुआ था।
- कुतुबुद्दीन ऐबक ने उत्तराधिकार युद्ध की चुनौतियों का सामना अपनी कुशल वैवाहिक नीति से किया। उसने मुहम्मद गोरी के विश्वस्त

इकाई V

- **प्रशासन और अर्थव्यवस्था :** सल्तनत के समय में प्रशासन, राज्य का स्वरूप –धर्मतंत्रीय और ईशकेंद्रित, केंद्रीय, प्रांतीय और स्थानीय प्रशासन, उत्तराधिकार का नियम।
- शेरशाह के प्रशासनिक सुधार; मुगल प्रशासन–केंद्रीय, प्रांतीय और स्थानीय : मनसबदारी और जागीरदारी पद्धतियाँ।
- **दक्षिण में प्रशासनिक प्रणाली :** विजयनगर राज्य और शासन व्यवस्था, बहमनी प्रशासनिक प्रणाली; मराठा प्रशासन–अष्ट प्रधान।
- दिल्ली सल्तनत और मुगलों के शासनकाल में सरहद संबंधी नीतियाँ।
- सल्तनत और मुगलों के शासन के अंतर–राज्य संबंध।
- कृषि उत्पादन और सिंचाई व्यवस्था, ग्राम अर्थव्यवस्था, किसान वर्ग, अनुदान और कृषि ऋण। शहरीकरण और जनांकिकीय ढाँचा।
- **उद्योग :** सूती कपड़ा, हस्तशिल्प, कृषि आधारित उद्योग, संगठन, कारखाने और प्रौद्योगिकी।
- **व्यापार और वाणिज्य :** राज्य नीतियाँ, आंतरिक और बाह्य व्यापार : यूरोपीय व्यापार, व्यापार केंद्र और पत्तन, परिवहन और संचार।
- हुंडी (विनिमय पत्र) और बीमा, राज्य की आय और व्यय, मुद्रा, टकसाल प्रणाली, दुर्भिक्ष और किसान विद्रोह।

5.1 मध्यकालीन प्रशासन
[Medieval Administration]

दिल्ली सल्तनत की प्रशासनिक व्यवस्था

दिल्ली सल्तनत का प्रशासन अरबी-फारसी पद्धति पर आधारित था। मुस्लिम जगत में शरीयत के अनुसार इस्लाम धर्म के कानूनों का पालन करना 'खलीफा' एवं 'सुल्तान' का प्रमुख कर्त्तव्य होता था। सल्तनत के अधिकांश सुल्तानों ने स्वयं को 'खलीफा' का 'नायब' कहा और सुल्तान के पद की स्वीकृति प्राप्त की थी।

केंद्रीय प्रशासन

सुल्तान

- सुल्तान केंद्रीय शासन का प्रधान होता था। वह प्रशासन का सर्वोच्च अधिकारी, सेनाओं का प्रधान सेनापति एवं न्यायिक मामलों का अंतिम न्यायाधीश था।
- सुल्तान राज्य के महत्त्वपूर्ण मामलों की सुनवाई 'मजलिस-ए-खलवत' में किया करता था, जिसमें अत्यंत विश्वासपात्र एवं उच्च अधिकारी भाग लेते थे।

अमीर वर्ग

ये विदेशी मूल के लोग थे, जिसमें तुर्कीदास एवं गैर-तुर्की (ताजिक) कुलीन वर्ग के लोग सम्मिलित थे, जो राजकीय शक्ति पर व्यावहारिक नियंत्रण रखते थे।

उलेमा वर्ग

इस्लामी धर्मगुरुओं एवं शरीयत कानून के रूढ़िवादी व्याख्याकारों को 'उलेमा' कहा जाता था। ये सुल्तान के धार्मिक एवं न्यायिक मामलों के प्रमुख सलाहकार थे।

खलीफा

इस्लाम धर्म के संस्थापक पैगंबर मुहम्मद की मृत्यु के बाद उनके उत्तराधिकारी खलीफा कहलाए। प्रथम खलीफा अबू-बक्र थे, जो धर्म एवं राज्य के प्रमुख थे। मदीना उनके राज्य की राजधानी थी। खलीफाओं में प्रथम- उमय्यद वंश (दमिश्क) तथा द्वितीय (अंतिम)- अब्बासी वंश (बगदाद) से संबंधित थे।

- इल्तुतमिश दिल्ली सल्तनत का प्रथम सुल्तान था। जिसने बगदाद के खलीफा से स्वीकृति प्राप्त की थी।
- अलाउद्दीन ख़िलजी ने 'यामिनी-उल-खिलाफत' (खलीफा का नायब) की उपाधि ग्रहण की थी।
- मुबारकशाह ख़िलजी ने सर्वप्रथम स्वयं को खलीफा घोषित किया था।
- मुहम्मद बिन तुगलक ने अपने सिक्कों पर खलीफा का नाम अंकित करवाया था।

केंद्रीय प्रशासन

शासन कार्य में सुल्तान की सहायता करने के लिये अनेक मंत्री एवं उसके अधीन सरकारी विभाग थे। सभी प्रभावशाली पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की सामान्य संज्ञा अमीर थी। मंत्रियों की कोई परिषद नहीं होती थी। प्रत्येक मंत्री का चयन स्वयं सुल्तान करता था और उसी की कृपा पर वह पद पर बना रहता था। बरनी ने सल्तनत काल के चार प्रमुख विभागों का उल्लेख किया है, जो प्रशासन के आधार स्तम्भ थे- दीवान-ए-विजारत, दीवान-ए-अर्ज, दीवान-ए-इंशा और दीवान-ए-रसालत।

प्रशासन में सुल्तान की सहायता के लिये विभिन्न मंत्री और अन्य अधिकारी थे। ये निम्नलिखित प्रकार के थे-

दीवान-ए-विजारत

- केंद्र प्रशासन में इस विभाग का स्थान महत्त्वपूर्ण था, इस विभाग का प्रधान वजीर होता था।
- वजीर राज्य का प्रधानमंत्री होता था। वह 'दीवान-ए-वजारत' (राजस्व विभाग) का प्रमुख था। वह सैन्य व्यवस्था, कर-प्रणाली, लगान एवं दान आदि की देख-रेख करने वाला अधिकारी होता था। इसकी सहायता के लिये नायब-वजीर, मुशरिफ-ए-मुमालिक (प्रांतों एवं अन्य विभागों के आय की देख-रेख) एवं मुस्तौफी-ए-मुमालिक (राज्य की आय की जाँच) होते थे।
- दीवान-ए-विजारत एक बड़ा विभाग था। इसके अंतर्गत एक बड़ा सचिवालय था।
- प्रारंभ में वजीर मुख्यत: सैनिक अधिकारी था, परंतु 13वीं-19वीं सदी में राजस्व विभाग के सर्वोच्च अधिकारी के रूप में प्रतिष्ठित हो गया था।
- बलबन के समय में वजीर की शक्तियाँ निम्न स्तर पर जा पहुँची थी। उसके समय में ख्वाजा हसन नाममात्र का वजीर था।
- तुगलक काल मुस्लिम भारतीय विजारत का स्वर्णकाल था।
- गयासुद्दीन तुगलक ने इस क्षेत्र में नवीन प्रयोग करते हुए सुल्तान को परामर्श हेतु भूतपूर्व वजीरों को आमंत्रित किया।
- फिरोज़शाह तुगलक के समय वजीर का पद अपने चरम पर पहुँच गया।
- सैय्यद और लोदियों के काल में वजीर पद की गरिमा घटने लगी।

सुल्तान	वजीर
महमूद गजनवी	अब्बास फजल बिन अहमद
मुहम्मद गोरी	एल्दौज, कुबाचा, ऐबक
इल्तुतमिश	फखरुलमुल्क इसामी, निजामुलमुल्क जुनैदी
रजिया	ख्वाजा मुहज्जबुद्दीन

5.2 मध्यकालीन अर्थव्यवस्था
[Medieval Economy]

सल्तनतकालीन अर्थव्यवस्था

कृषि

- सल्तनत काल में राजस्व की प्रमुख मद भू-राजस्व ही थी, जो सामान्यत: 1/5 होती थी। किंतु, अलाउद्दीन ख़िलजी ने भू-राजस्व की दर को 1/2 कर दिया था।
- भू-राजस्व के लिये 'गल्ला-बक्शी' या 'बटाई' परंपरा जो कि पिछले वर्ष के फसलों के उत्पादन के आधार पर निर्धारित होती थी, जिसे गयासुद्दीन तुगलक ने पुन: अपनाया। विदित है कि अलाउद्दीन ख़िलजी ने इस हेतु पैमाइश (मसाहत) को अपनाया और जिसमें प्रति बीघा उत्पादन को आधार बनाया गया था।
- 'कनकूत' या 'नस्क' प्रणाली भी प्रचलित थी, जिसमें अनुमान के आधार पर राजस्व निर्धारण किया जाता था।
- भू-राजस्व अनाज व नकद दोनों में लिया जाता था। अलाउद्दीन ख़िलजी और सिकंदर लोदी ने अनाज में वसूली को वरीयता दी तो अन्य शासकों ने नकद वसूली को। उल्लेखनीय है कि सिकंदर लोदी ने अनाज पर से कर (आय कर) हटा लिया था।
- सिंचाई व्यवस्था में भी व्यापक परिवर्तन आया और 13वीं-14वीं सदी में इस व्यवस्था में 'नोरिया' (Water Wheel) तकनीक का विकास हुआ, जो कि गियर प्रणाली से संबंधित थी। इस तकनीक के कारण अत्यधिक मात्रा में आसानी से पानी उपलब्ध होने लगा। ध्यातव्य है कि हर्ष के समय 'रहँट' या 'अरघट' प्रणाली का उल्लेख मिलता है किंतु नोरिया उससे उन्नत प्रणाली थी।
- सल्तनत काल में सिंचाई के मुख्य साधन कुएँ ही थे।
- गयासुद्दीन तुगलक प्रथम सुल्तान था जिसने सिंचाई के लिये नहर प्रणाली को अपनाया किंतु फिरोज़शाह तुगलक ने इसे व्यवस्थित रूप देते हुए नहर तंत्र को विकसित कर दिया, जिसमें उसकी प्रमुख नहर आज भी कार्यरत है।
- इब्नबतूता भारत में एक वर्ष में तीन प्रकार के चावल की खेती की बात करता है, जबकि अन्य इतिहासकार दो प्रकार की। विदित है कि दक्षिणी चीन के अतिरिक्त ऐसा कहीं नहीं होता था।
- अलाउद्दीन ख़िलजी के अधिकारी ठक्करफेरू ने 25 प्रकार के फसलों के नाम बताए हैं।
- अच्छी किस्म के चावल के लिये **सरसुती (बंगाल)** अत्यधिक प्रसिद्ध था।

उत्पादन	क्षेत्र
रेशम	खंभात क्षेत्र (गुजरात)
नमक	सांभर झील
ऊनी शॉल	कश्मीर (उच्च किस्म का ऊन तिब्बत से आयात किया जाता था)
वस्त्र उत्पादन	बंगाल व गुजरात। सोनार गाँव मलमल व कच्चे रेशम के लिये प्रसिद्ध था। 14वीं-15वीं सदी में भारत ने रेशम उत्पादन चीन से सीखा। सूती वस्त्र को 'किरपास' कहा जाता था और मलमल के कपड़े को 'गंगाजल' व 'शबनम' कहा जाता था। दिल्ली सूती वस्त्रों की रंगाई का प्रमुख केंद्र था।
पान के पत्ते	धार (मालवा)
नील	बयाना (भरतपुर, राजस्थान) व लाहौर

उद्योग व व्यापार

- तुर्क मुख्यत: नगर निवासी थे। अत: उनकी प्रशासनिक-आर्थिक व्यवस्था ने नगरों के चरित्र में मात्रात्मक व गुणात्मक परिवर्तन किये।
- तुर्कों के आगमन के साथ ही नवीन प्रौद्योगिकी भी भारत आई, जिनके कारण भारत की उत्पादन संरचना में परिवर्तन हुआ, जिसे मोहम्मद हबीब 'नगरीय क्रांति' की संज्ञा देते हैं।
- लगभग सभी प्रमुख सुल्तानों ने नए नगर बसाए, जिससे नगरों का विस्तार हुआ साथ ही रोज़गार और सामाजिक भेदभाव से मुक्ति के लिये ग्रामीण जनता शहरों की ओर आकर्षित हुई।
- प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए-
  - धातु शिल्प में परिवर्तन, विशेषकर सैनिक उपयोग के लिये लौह-प्रौद्योगिकी का विकास हुआ।
  - कागज़ निर्माण में तेज़ी आई। चूँकि, सल्तनत काल में कई संस्कृत ग्रंथों का फारसी में अनुवाद हुआ और नए ग्रंथों की रचना हुई। इसके साथ ही इन्हें सुरक्षित रखने के लिये 'जिल्दसाज़ी' भी एक उद्योग बन गई। 'बंगाल एवं गुजरात' कागज़ उद्योग के महत्त्वपूर्ण केंद्र थे।
  - सल्तनत के शासकों ने इतिहास लेखन में विशेष रुचि दिखाई और अपने कार्यों को सकारात्मक रूप से प्रदर्शित करवा कर वे इसके द्वारा महान बनना चाहते थे।
  - तकली एवं चरखे के प्रयोग से वस्त्र उद्योग का विकास हुआ।
  - प्रोफेसर इरफान हबीब के अनुसार '12वीं से 14वीं सदी के मध्य चरखे का प्रयोग आरंभ हुआ।'
  - रूई धुनने वाले या बुनकर के लिये 'नद्दाफ' शब्द का प्रयोग होता था।
  - कमीना, महीन, किरपास एवं सलाहती कपड़ों के विभिन्न प्रकार थे।
  - 'पटोला' (गुजरात) रेशम वस्त्र उद्योग का महत्त्वपूर्ण केंद्र था।
  - आसवन विधि का भी ज्ञान हुआ, जिसका मुख्य उपयोग मंदिरा, इत्र और औषधि निर्माण में किया जाता था। इसके साथ ही धातुकला के अंतर्गत 'कलई' विधि का प्रयोग किया जाने लगा और कलई करने में जस्ते का इस्तेमाल किया गया।

इकाई VI

- **समाज और संस्कृति :** सामाजिक संगठन और सामाजिक संरचना।
- **सूफी :** उनके सिलसिले, विश्वास और प्रथाएँ, प्रमुख सूफी संत, सामाजिक समकालीकरण।
- **भक्ति आंदोलन :** शैववाद, वैष्णववाद, शक्तिवाद।
- **मध्यकालीन युग के संत :** उत्तर और दक्षिण के संत, समाज-राजनीतिक और धार्मिक जीवन पर उनका प्रभाव। मध्यकालीन भारत की स्त्री संत।
- **सिख आंदोलन :** गुरुनानक देव : उनकी शिक्षाएँ और प्रथाएँ, आदिग्रंथ; खालसा।
- **सामाजिक वर्गीकरण :** शासक वर्ग, प्रमुख धार्मिक समूह, उलेमा, वणिक और व्यावसायिक वर्ग- राजपूत समाज।
- **ग्रामीण समाज :** छोटे सामन्त, ग्राम कर्मचारी, कृषक और गैर-कृषक वर्ग, शिल्पकार।
- **स्त्रियों की स्थिति :** जनाना व्यवस्था-देवदासी व्यवस्था।
- शिक्षा का विकास, शिक्षा के केंद्र और पाठ्यक्रम, मदरसा शिक्षा।
- **ललित कलाएँ :** चित्रकारी की प्रमुख शैलियाँ- मुगल, राजस्थानी, पहाड़ी, गढ़वाली; संगीत का विकास।
- कला और वास्तुकला, इंडो-इस्लामी वास्तुकला, मुगल वास्तुकला, क्षेत्रीय वास्तुकला की शैलियाँ।
- इंडो-अरबी वास्तुकला, मुगल उद्यान, मराठा दुर्ग, पूजा गृह और मंदिर।

6.1 मध्यकालीन समाज
[Medieval Society]

सूफी एवं भक्ति आंदोलन

संतों तथा सूफियों के प्रयासों से जो भक्ति एवं सूफी आंदोलन आरंभ हुए उनसे मध्ययुगीन भारत के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में एक नवीन शक्ति एवं गतिशीलता का संचार हुआ। भक्ति आंदोलन के परिणामों में मुख्य रूप से भक्ति के प्रति आस्था का विकास, लोकभाषाओं में साहित्य रचना का आरंभ, इस्लाम के साथ सहयोग के परिणामस्वरूप सहिष्णुता की भावना का विकास हुआ जिसकी वजह से जाति व्यवस्था के बंधनों में शिथिलता आई और विचार तथा कर्म दोनों स्तरों पर समाज का उन्नयन हुआ। जहाँ तक सूफीवाद का संबंध है, उसने उन तत्त्वों (सृजनात्मक, सामाजिक और बौद्धिक शक्तियों) को अपनी ओर आकृष्ट किया जो सामाजिक और सांस्कृतिक क्रांति के वाहक के रूप में उभरकर सामने आये। तुर्की आधिपत्य के काल में जब देश का जनजीवन घुटन का अनुभव कर रहा था तब सूफी खानकाह ने सामाजिक संदेश फैलाने एवं सुधारवादी राजनीति का उन्माद पैदा करने का काम किया।

सूफी आंदोलन

- सूफी मत, इस्लाम धर्म में उदार, रहस्यवादी और संश्लेषणात्मक प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाली विचारधारा है। सूफी शब्द की उत्पत्ति के संबंध में इतिहासकारों में मतभेद है। विभिन्न विद्वानों ने 'सूफी' शब्द की व्युत्पत्तिमूलक व्याख्या भिन्न-भिन्न दृष्टियों से की है।
- सबसे प्रसिद्ध मत के अनुसार सूफी शब्द 'सूफ' से विकसित हुआ है जिसका तात्पर्य है- ऊन या ऊनी कपड़ा। सूफी साधक आरंभिक समय में भेड़ या बकरी की ऊन से बने कपड़े धारण किया करते थे। संभवतः इसीलिये उन्हें सूफी कह दिया गया।
- दूसरे मत के अनुसार, सूफी शब्द की उत्पत्ति 'सफा' से हुई है जिसका अर्थ है- पवित्रता या शुद्धि की अवस्था। इस व्याख्या के अनुसार आचरण की पवित्रता और शुद्धता के कारण ही इन लोगों को सूफी कहा गया।
- कुछ विद्वानों ने सफा शब्द की एक और व्याख्या की। उनके अनुसार मोहम्मद पैगम्बर द्वारा मदीना की मस्जिद के बाहर 'सफा' अर्थात् मक्का की एक पहाड़ी पर जिन लोगों ने शरण ली, वही आगे चलकर सूफी कहलाए।
- वस्तुतः इस विवाद का कोई भी सर्वमान्य निर्णय करना कठिन है। ज़्यादा संभावना इस बात की है कि सूफी शब्द की उत्पत्ति 'सूफ' अर्थात् 'ऊन' से ही हुई होगी क्योंकि प्रथम दृष्टया बाह्य विशेषताएँ ही समाज को नज़र आती हैं। आगे चलकर बाकी व्याख्याएँ क्रमशः विकसित होती गई होंगी। कुछ भी हो, आजकल इसका अर्थ 'तसव्वुफ़' को मानने वाले साधक ('इश्क मजाज़ी' और 'इश्क हकीकी' के सिद्धांत को मानते हुए सभी धर्मों से प्रेम करना) से ही लिया जाता है।

भारत में प्रमुख सूफी सिलसिले

चिश्ती सिलसिला

- भारत में चिश्ती संप्रदाय सबसे अधिक लोकप्रिय व प्रसिद्ध हुआ।
- भारत में चिश्ती परंपरा के प्रथम संत शेख उस्मान हारूनी के शिष्य ख़्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती थे। मोईनुद्दीन चिश्ती 1192 ई. में मुहम्मद गौरी के साथ भारत आए थे। इन्होंने 'चिश्तिया परंपरा' की नींव रखी थी।
- मोईनुद्दीन चिश्ती ने अजमेर को अपना केंद्र (खानकाह) बनाया। उनकी दरगाह अजमेर में स्थित है और 'ख़्वाजा साहब' के नाम से प्रसिद्ध है।
- वस्तुतः बाबा फरीद (गंज-ए-शकर) के कारण चिश्ती सिलसिले को भारत में अत्यधिक प्रसिद्धि मिली। इनकी प्रसिद्धि के प्रभाव से सिख गुरु अर्जुन देव ने 'गुरुग्रंथ साहिब' में इनके कथनों को संकलित कराया है।
- बाबा फरीद, ख़्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी के शिष्य थे और ख़्वाजा बख्तियार, मोईनुद्दीन चिश्ती के प्रमुख शिष्य थे।
- चिश्ती संतों में सबसे लोकप्रिय संत निज़ामुद्दीन औलिया, बाबा फरीद के शिष्य थे। माना जाता है कि निज़ामुद्दीन औलिया ने दिल्ली के सात सुल्तानों का शासनकाल देखा था, किंतु वे किसी भी सुल्तान के दरबार में उपस्थित नहीं हुए।
- निज़ामुद्दीन औलिया के प्रिय शिष्य अमीर खुसरो थे।
- चिश्ती संत नासिरुद्दीन महमूद 'चिराग-ए-दिल्ली' अर्थात् 'दिल्ली के चिराग' नाम से अधिक प्रसिद्ध हुए।
- दक्षिण भारत में चिश्ती सिलसिले को प्रारंभ करने का श्रेय निजामुद्दीन औलिया के शिष्य 'शेख बुरहानुद्दीन गरीब' को जाता है। इन्होंने दौलताबाद को अपने प्रचार-प्रसार का केंद्र बनाया।
- मुगल शासक अकबर फतेहपुर सीकरी के चिश्ती संत शेख सलीम चिश्ती के प्रति आदर भाव रखता था तथा अपने पुत्र जहाँगीर को उनका ही आशीर्वाद समझता था। 'फतेहपुर सीकरी' में अकबर ने शेख सलीम चिश्ती के मकबरे का निर्माण कराया।

चिश्ती सिलसिले की विशेषता

- चिश्ती सिलसिले के संत प्रवृत्ति से अत्यंत उदार थे। उन्होंने ऊँच-नीच, धर्म-जाति और जन्म के भेदभाव को त्यागकर मानव सेवा व प्रेम को प्रमुखता दी।
- चिश्ती सिलसिले से संबंधित संत सुल्तान या अमीरों से कोई वास्ता नहीं रखते थे। एक बार अलाउद्दीन ख़िलजी ने निज़ामुद्दीन औलिया

इकाई VII

- **आधुनिक भारतीय इतिहास के स्रोत:** अभिलेखागारीय सामग्री, जीवन चरित और संस्मरण, समाचार पत्र, मौखिक साक्ष्य, सृजनात्मक साहित्य और चित्रकारी, स्मारक, सिक्के।
- **ब्रिटिश सत्ता का उत्थान:** 16वीं और 18वीं शताब्दी के दौरान भारत में यूरोपीय व्यापारी - पुर्तगाली, डच, फ्राँसिसी और ब्रिटिश।
- भारत में ब्रिटिश आधिपत्य क्षेत्र (डोमिनियन) की स्थापना और विस्तार।
- भारत के प्रमुख राज्यों के साथ ब्रिटिश संबंध – बंगाल, अवध, हैदराबाद, मैसूर, कर्नाटक और पंजाब।
- 1857 का विद्रोह, कारण, प्रकृति और प्रभाव।
- कंपनी और ताज (क्राउन) का प्रशासन; ईस्ट इंडिया कंपनी के अधीन केंद्रीय तथा प्रांतीय ढाँचे का क्रमिक विकास (1773-1858)।
- कंपनी के शासन काल में सर्वोच्च सत्ता, सिविल सर्विस, न्यायतंत्र, पुलिस और सेना; ताज (क्राउन) के अधीन रजवाड़ों की रियासतों में सर्वोच्च सत्ता के प्रति ब्रिटिश नीति।
- स्थानीय स्व–सरकार
- संवैधानिक परिवर्तन, 1909-1935

7.1 आधुनिक भारतीय इतिहास के स्रोत
(The Sources of Modern Indian History)

किसी भी कालखंड के इतिहास लेखन के लिये सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है उस काल खंड से संबंधित स्रोत-सामग्री। यूरोपियों के आगमन के पश्चात् भारत में वैज्ञानिक इतिहास लेखन का आरंभ हुआ। इसमें स्रोत-सामग्री की विश्वसनीयता और उसके महत्त्व को इतिहास लेखन में प्रमुखता दी गई।

- आधुनिक भारत से संबंधित विभिन्न प्रकार की स्रोत-सामग्रियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं, जो निम्नलिखित हैं–
  - अभिलेखीय सामग्री
  - जीवन चरित एवं संस्मरण
  - समाचार पत्र
  - मौखिक साक्ष्य
  - सृजनात्मक साहित्य
  - चित्रकारी
  - स्मारक
  - सिक्के

अभिलेखीय सामग्री

- 1600 से 1857 तक की ईस्ट इंडिया कंपनी की व्यापारिक गतिविधियों से संबंधित अभिलेख प्रचुर मात्रा में मिलते हैं।
- अभिलेखीय सामग्री निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभाजित की जा सकती है–
  - केंद्र सरकार के अभिलेख
  - राज्य सरकार के अभिलेख
  - मध्यवर्ती एवं अधीनस्थ प्राधिकरणों के अभिलेख
  - न्यायिक अभिलेख
  - निजी अभिलेख
  - विदेशों में उपलब्ध अभिलेख आदि।

केंद्र सरकार के अभिलेख

- राष्ट्रीय अभिलेखाकार, नई दिल्ली में 18वीं शताब्दी के मध्य से वर्तमान काल तक के अभिलेख संगृहीत हैं। 1773 के रेगुलेटिंग अधिनियम से लेकर विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों, केंद्रीकृत राजव्यवस्था, कंपनी की प्रशासनिक व्यवस्था के साथ-साथ 1857 के बाद की प्रशासनिक एवं संवैधानिक विकास जैसे लोक सेवा का गठन, स्थानीय स्वशासन का प्रारंभ, प्रांतों का प्रादेशिक पुनर्गठन से संबंधित अभिलेखीय सामग्री यहाँ संगृहीत है।
- 1967 में प्रथम सर्वे पर जनरल जेम्स रेनल की नियुक्ति हुई जिसके पश्चात् भारत के सीमा क्षेत्रों का वैज्ञानिक मान चित्रण आरंभ हुआ।
- रिफार्म कार्यालय के अभिलेख 1920-37 के मध्य हुए संवैधानिक विकास का अभिलेख प्रस्तुत करते हैं।

राज्य सरकारों के अभिलेख

- राज्य सरकारों के अभिलेखों में शामिल हैं– ब्रिटिश भारतीय प्रांतों के अभिलेख, देशी रियासतों के अभिलेख, ब्रिटिश शासन के तहत बर्मा जैसे देशों के अभिलेख आदि।

न्यायिक अभिलेख

- मेयर कोर्ट, फोर्ट सेंट जॉर्ज के अभिलेख सबसे प्राचीन न्यायिक अभिलेख है जो मद्रास अभिलेख कार्यालय में है। इसी प्रकार फोर्ट विलियम और बाम्बे के मेयर कोर्ट के अभिलेख सुरक्षित रखे हुए हैं।
- तीनों प्रेसिडेंसियों के दीवानी और फौजदारी अदालतों के न्यायिक अभिलेख भी बेहद उपयोगी हैं।

प्रकाशित अभिलेख

- संसदीय पत्र ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रकाशित अभिलेख हैं जिसमें ईस्ट इंडिया कंपनी और भारत सरकार के कार्यों का ब्योरा मिलता है।
- भारतीय एवं प्रांतीय विधानमंडलों की कार्यवाहियों, केंद्रीय एवं प्रांतीय सरकारों द्वारा प्रकाशित बजट, विधियाँ और विनियम भी महत्त्वपूर्ण शोध सामग्री हैं।

निजी अभिलेख

- इसके तहत व्यक्तियों एवं परिवारों से संबद्ध ऐतिहासिक महत्त्व के पत्र एवं दस्तावेज़ आते हैं। बैंकों, व्यापार घरानों और चैम्बर ऑफ कॉमर्स के अभिलेख आर्थिक परिवर्तन पर महत्त्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध कराते हैं। राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख नेताओं के पत्रादि और कांग्रेस के अभिलेख भी भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के इतिहास लेखन के लिये महत्त्वपूर्ण स्रोत सामग्री हैं।

विदेशी संग्रहालयों में संरक्षित अभिलेख

- इंडिया ऑफिस रिकॉर्ड्स (कॉमनवेल्थ रिलेशंस ऑफिस, लन्दन) में ऐसे कई अभिलेख मौजूद हैं, जो हमारे देश में नहीं हैं।
- ब्रिटिश वायसराय, राज्य सचिव और अन्य अधिकारियों के पत्रादि लंदन के ब्रिटिश संग्रहालय में संरक्षित हैं।
- भारत के शैक्षिक एवं सामाजिक विकास के बारे में चर्च मिशनरी सोसायटी ऑफ लंदन के अभिलेख भी विशेष महत्त्व के हैं।

7.2 ब्रिटिश सत्ता का उत्थान
(Rise of British Power)

भूमिका

1707 में मुगल बादशाह औरंगज़ेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल साम्राज्य की पतनोन्मुखी परिस्थितियों का लाभ उठाकर कई अधीनस्थ राज्यों ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर तो लिया, किंतु भारत में ऐसा कोई शक्तिशाली राज्य नहीं था, जो भारत को एक सूत्र में बांध सके। इस कारण भारत में प्रारंभिक व्यापारिक एकाधिकार प्राप्त करने के उद्देश्य से यूरोपीय कंपनियों के बीच क्षेत्रीय राज्यों के सहयोग से एक चतुर्भुजी संघर्ष प्रारंभ हो गया। अंततः इस संघर्ष में अंग्रेज़ों को विजयश्री प्राप्त हुई। कालांतर में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारतीय राज्यों को जीतकर, भारत में अपने उपनिवेश की स्थापना की।

भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन

- भारत में यूरोपीय कंपनियों का आगमन कोई आकस्मिक घटना नहीं थी। यूरोप के साथ भारत के व्यापारिक संबंध बहुत पुराने (यूनानियों के समय से) थे। मध्यकाल में यूरोप और दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ भारत का व्यापार अनेक मार्गों से चलता था। सवाल उठता है, आखिर ऐसी क्या परिस्थितियाँ बनीं कि यूरोपियों को एशिया से व्यापार के लिये पुनः नए मार्गों की खोज करनी पड़ी?
- ध्यातव्य है कि जब वर्ष 1453 में उस्मानिया सल्तनत ने एशिया माइनर को जीत लिया और कुस्तुन्तुनिया पर अधिकार कर लिया तो पूर्व और पश्चिम के बीच के पुराने व्यापारिक मार्ग तुर्कों के नियंत्रण में आ गए। इस तरह पूर्वी देशों और यूरोप के बीच पारंपरिक व्यापारिक मार्ग पर अंकुश लग गया। इस प्रकार उत्पन्न परिस्थितियों के कारण पश्चिमी यूरोपीय देशों के व्यापारी भारत और इंडोनेशिया के स्पाइस आइलैंड (मसाले के द्वीप) के लिये नए और अधिक सुरक्षित समुद्री मार्गों की तलाश करने लगे।
- प्रारंभ में यूरोपियों की मंशा व्यापार में लगे अरबों और वेनिसवासियों के एकाधिकार को तोड़ना, तुर्कों की शत्रुता मोल लेने से बचना और पूर्व के साथ सीधे व्यापार-संबंध स्थापित करने की थी।
- यूरोपियों के लिये अब नए समुद्री मार्ग खोजना उतना कठिन कार्य नहीं था, क्योंकि 15वीं-16वीं सदी तक यूरोप में पुनर्जागरण व प्रबोधन के परिणामस्वरूप नई भौगोलिक खोजों को केंद्रीय सत्ता द्वारा प्रोत्साहन दिया जा रहा था, साथ ही जहाज़ निर्माण और समुद्री यातायात में प्रगति तथा कुतुबनुमा (दिशा सूचक) का आविष्कार भी हो गया था। फलतः यूरोपीय लोग अब यह कार्य करने में अच्छी तरह समर्थ थे।
- नए समुद्री मार्गों की खोज का पहला कदम पुर्तगाल और स्पेन ने उठाया। इन देशों के नाविकों ने अपनी-अपनी सरकारों की सहायता से भौगोलिक खोजों का एक नया युग प्रारंभ किया।
- इसी पृष्ठभूमि में स्पेन का नाविक कोलंबस 1492 में भारत की खोज में निकला, परंतु वह भटक कर अमेरिका चला गया। इस प्रकार उसने अमेरिका की खोज की। 1498 में पुर्तगाल के नाविक वास्कोडिगामा ने एक नया समुद्री मार्ग खोज निकाला, जिससे वह उत्तमाशा अंतरीप (केप ऑफ गुड होप) का चक्कर काटते हुए भारत के कालीकट तट (केरल) पर पहुँचा। ध्यातव्य है कि उत्तमाशा अंतरीप की खोज बार्थोलोम्यू डियाज़ ने 1488 में की थी।

पुर्तगालियों का आगमन

- सर्वप्रथम 1498 में 'वास्कोडिगामा' नामक पुर्तगाली नाविक उत्तमाशा अंतरीप का चक्कर काटते हुए एक गुजराती व्यापारी अब्दुल मजीद की सहायता से भारत के 'कालीकट' बंदरगाह पर पहुँचा। जहाँ 'कालीकट' के हिंदू शासक (उपाधि-जमोरिन) ने उसका स्वागत किया।
- वास्कोडिगामा ने कालीकट के राजा से व्यापार का अधिकार प्राप्त किया, जिसका अरबी व्यापारियों ने विरोध किया। विरोध का कारण आर्थिक हित था। अंततः वास्कोडिगामा जिस मसालों को लेकर वापस स्वदेश लौटा, वह पूरी यात्रा की कीमत के 60 गुना दामों पर बिका। परिणामतः इस लाभकारी घटना ने पुर्तगाली व्यापारियों को भारत आने के लिये आकर्षित किया।
- ध्यातव्य है कि पूर्व के साथ व्यापार हेतु 'इस्तादो-द-इंडिया' नामक कंपनी की स्थापना की गई। वास्तव में पोप अलैक्जेंडर-VI द्वारा 1453 में ही पूर्वी सामुद्रिक व्यापार हेतु आज्ञापत्र दे दिया गया था।
- 1500 में 'पेड्रो अल्वरेज कैब्राल' के नेतृत्व में दो जहाज़ी बेड़े भारत आए।
- वास्कोडिगामा 1502 में दूसरी बार भारत आया। इसके बाद पुर्तगालियों का भारत में निरंतर आगमन प्रारंभ हुआ। पुर्तगालियों की पहली फैक्ट्री कालीकट में स्थापित हुई, जिसे जमोरिन द्वारा बाद में बंद करवा दिया गया।
- 1503 में काली मिर्च और मसालों के व्यापार पर एकाधिकार प्राप्त करने के उद्देश्य से पुर्तगालियों ने कोचीन के पास अपनी पहली व्यापारिक कोठी बनाई। इसके बाद कन्नूर (1505) में पुर्तगालियों ने अपनी दूसरी फैक्ट्री बनाई।

पुर्तगाली वायसराय

- **'फ्राँसिस्को-डी-अल्मीडा'** (1505-1509) भारत में पहला पुर्तगाली वायसराय बनकर आया। उसने भारत पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिये मज़बूत सामुद्रिक नीति का संचालन किया, जिसे 'ब्लू वाटर पॉलिसी' अथवा 'शांत जल की नीति' कहा जाता है।

7.3 1857 का विद्रोह (Revolt of 1857)

1757 में 'प्लासी युद्ध' के बाद अंग्रेज़ों ने भारत में अपने उपनिवेश की शुरुआत की। ब्रिटिश उपनिवेश का प्रारंभिक उद्देश्य अधिकतम आर्थिक व व्यापारिक लाभ कमाना था जो कालांतर में भारत को कच्चे माल का निर्यातक और तैयार माल के आयातक बनाने तक केंद्रित हो गया। वहीं जहाँ एक तरफ भारत का तेज़ी से विऔद्योगीकरण हुआ तथा भारतीय समुदाय की कृषि पर निर्भरता अब पहले से और अधिक बढ़ गई। दूसरी तरफ भारी-भरकम कर, ज़मींदारों के अत्याचार व अंग्रेज़ों की भू-नीतियों के कारण किसान समुदाय भी निम्नतम स्थिति में पहुँच गया। कच्चे माल के निर्यात को बढ़ावा देने के लिये कृषि के वाणिज्यीकरण पर बल दिया गया जिसमें नील, कपास, अफीम, चाय, जूट, कॉफी आदि के उत्पादन हेतु कृषकों को मज़बूर किया गया।

कृषि के वाणिज्यीकरण से खाद्यान्न में कमी आई जिससे अकाल की बारंबारता बढ़ने लगी। परिणामस्वरूप देश में अंग्रेज़ों के विरुद्ध जन आक्रोश बढ़ता गया, जो 1857 में एक व्यापक जनविद्रोह के रूप में भड़क उठा। 1857 के विद्रोह का आरंभ 10 मई, 1857 को मेरठ में कंपनी के भारतीय सिपाहियों द्वारा शुरू हुआ, जो धीरे-धीरे कानपुर, बरेली, झाँसी, दिल्ली, अवध आदि स्थानों तक फैल गया। इसकी शुरुआत एक सैन्य विद्रोह के रूप में हुई, परंतु कालांतर में उसका स्वरूप बदलकर ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध एक 'जनव्यापी विद्रोह' का हो गया।

1857 के विद्रोह के प्रमुख कारण

राजनीतिक कारण

- 1857 की क्रांति के राजनीतिक कारणों में लॉर्ड वेलेजली की 'सहायक संधि' तथा लॉर्ड डलहौजी का 'व्यपगत का सिद्धांत' प्रमुख था।
- वेलेजली की 'सहायक संधि' के अनुसार भारतीय राजाओं को अपने राज्यों में कंपनी की सेना रखनी पड़ती थी। सहायक संधि से भारतीय राजाओं की स्वतंत्रता समाप्त होने लगी और राज्यों में कंपनी का हस्तक्षेप बढ़ने लगा था।
- लॉर्ड डलहौजी की 'राज्य हड़प नीति' या 'व्यपगत का सिद्धांत' (Doctrine of lapse) द्वारा अंग्रेज़ों ने हिंदू राजाओं के दत्तक पुत्र लेने के अधिकार को समाप्त कर दिया। वैध उत्तराधिकारी नहीं होने की स्थिति में राज्यों का विलय अंग्रेज़ी राज्यों में कर लिया जाता था।
- लॉर्ड डलहौजी द्वारा विलय किये गए राज्यों का क्रम– सतारा (1848) → जैतपुर, संबलपुर (1849) → बघाट (1850) → उदयपुर (1852) → झाँसी (1853) → नागपुर (1854) → करौली (1855) → अवध (1856)
- रियासतों के विलय के अतिरिक्त पेशवा (नाना साहब) की पेंशन रोके जाने का विषय भी असंतोष का कारण बना।

नोटः डलहौजी ने 1855 में करौली को भी अपनी व्यपगत नीति के तहत विलय किया था, किंतु बोर्ड ऑफ कंट्रोल ने मान्यता नहीं दी। फलतः इसे वापस लौटाना पड़ा।

- 1856 में अवध का विलय कुप्रशासन के आधार पर किया गया क्योंकि डलहौजी की हड़प नीति यहाँ लागू नहीं हो रही थी।
- इसके लिये अवध के रेजिडेंट स्लीमेन से रिपोर्ट मांगी गई, किंतु उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया और कहा कि "अंग्रेज़ों के लिये उनका नाम किसी अन्य चीज़ से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण है।"
- बाद में आउट्रम को वहाँ रेजिडेंट बनाकर भेजा गया और इसी की रिपोर्ट के आधार पर 1856 में अवध का विलय किया गया।
- विलय के बाद हेनरी लॉरेंस को अवध का रेजिडेंट बनाया गया।

प्रशासनिक कारण

- अंग्रेज़ों ने भेदभावपूर्ण नीति अपनाते हुए, भारतीयों को प्रशासनिक सेवाओं में सम्मिलित नहीं होने दिया तथा उच्च पदों पर भारतीयों को हटाकर ब्रिटिश लोगों को नियुक्त किया। अंग्रेज़ भारतीयों को उच्च सेवाओं हेतु अयोग्य मानते थे। इन सब बातों से क्षुब्ध होकर भारतीयों में आक्रोश का भाव जाग्रत हो चुका था, जो 1857 की क्रांति के रूप में सामने आया।
- अंग्रेज़ न्याय के क्षेत्र में भी स्वयं को भारतीयों से उच्च व श्रेष्ठ समझते थे। भारतीय जज किसी अंग्रेज़ के विरुद्ध मुकदमे की सुनवाई नहीं कर सकते थे। अंग्रेज़ों की न्याय प्रणाली पक्षपातपूर्ण, दीर्घावधिक व खर्चीली थी। अतः भारतीय इससे असंतुष्ट थे, जो 1857 के विद्रोह में जनाक्रोश का एक कारण बना।
- डलहौजी ने तंजौर तथा कर्नाटक के नवाबों की उपाधियाँ जब्त कर लीं, मुगल शासक बहादुरशाह को अपमानित कर लाल किला खाली करने को कहा और लॉर्ड कैनिंग ने घोषणा की कि बहादुरशाह के उत्तराधिकारी मुगल सम्राट नहीं सिर्फ राजा ही कहलाएंगे। परिणामतः मुगलों ने क्रांति के समय विद्रोहियों का साथ दिया।
- प्रशासन संबंधी कार्यों में योग्यता की जगह धर्म को आधार बनाया गया जिससे ईसाईयत की धर्मांतरण पद्धति का प्रसार हुआ, जिससे आम जन में विद्रोह की भावना उत्पन्न हुई।
- 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध से ही अकालों की बारंबारता ने ब्रिटिश प्रशासनिक तंत्र की पोल खोल दी।

सामाजिक एवं धार्मिक कारण

- सांस्कृतिक सुधार की नीतियों से पारंपरिक भारतीय संस्कृति को हीन मानकर बदलाव करना, इससे समाज का रूढ़िवादी वर्ग ब्रिटिशों के विरुद्ध खड़ा हो गया।

7.4 कंपनी और ताज का प्रशासन
(Administration of Company and Crown)

केंद्रीय और प्रांतीय ढाँचे का क्रमिक विकास

1765 में कंपनी को बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी प्राप्त हुई। दीवानी अधिकार मिलते ही कंपनी के कर्मचारियों ने बंगाल में लूट-खसोट एवं व्यक्तिगत व्यापार द्वारा धन एकत्र करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन दिया। साथ ही, कंपनी द्वारा लगातार युद्धरत रहने से कंपनी की वित्तीय स्थिति खराब हुई तथा उसे भारी आर्थिक क्षति का सामना करना पड़ा। स्थिति इतनी गंभीर थी कि वह अपने कर्मचारियों के वेतन भुगतान में भी असमर्थता का अनुभव कर रही थी। फलत: कंपनी ने ब्रिटिश संसद से आर्थिक सहायता के लिये प्रस्ताव किया। प्रतिवेदन के फलस्वरूप ब्रिटिश संसद द्वारा रेग्युलेटिंग एक्ट पारित किया गया।

रेग्युलेटिंग एक्ट, 1773

भारत के संवैधानिक इतिहास में सन् 1773 का रेग्युलेटिंग एक्ट विशेष महत्त्व रखता है। यह अधिनियम (Act) भारत में कंपनी के प्रशासन पर ब्रिटिश संसदीय नियंत्रणों के प्रयासों की शुरुआत थी। परिणामत: अब कंपनी के शासनाधीन क्षेत्रों का प्रशासन कंपनी के व्यापारियों का निजी मामला नहीं रहा। इस एक्ट में उल्लिखित प्रावधान निम्नवत् थे-

- इस एक्ट के द्वारा कलकत्ता में उच्चतम न्यायालय (Supreme Court) की स्थापना की गई। इसमें एक मुख्य न्यायाधीश तथा तीन अन्य न्यायाधीश होते थे। उच्चतम न्यायालय को प्राथमिक तथा अपील के अधिकार दिये गए। यह न्यायालय सन् 1774 में गठित किया गया तथा सर एलिजाह इम्पे (Elijah Impey) को इसका मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया गया तथा चेम्बर्स, लिमेस्टर एवं हाइड अन्य न्यायाधीश नियुक्त हुए।
- इस अधिनियम के द्वारा बंगाल के गवर्नर को 'बंगाल का गवर्नर जनरल' पदनाम दे दिया गया। साथ ही, उसे कुछ विशेष मामलों में मद्रास तथा बंबई की प्रेसिडेंसियों का अधीक्षण भी करना था। बंगाल में एक प्रशासक मंडल बनाया गया, जिसमें गवर्नर जनरल तथा चार सदस्यों को नियुक्त किया गया। प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स तथा चार अन्य सदस्य फिलिप फ्राँसिस, क्लेवरिंग, मॉनसन तथा बारवेल थे। ये कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स की सिफारिश पर केवल ब्रिटिश सम्राट द्वारा ही हटाए जा सकते थे।
- प्रशासक मंडल के सदस्यों का निर्वाचन 5 वर्षों के लिये किया जाना था। इस मंडल में बहुमत से निर्णय होते थे। मत बराबर होने की स्थिति में अध्यक्ष अपना मत देता था।
- इस अधिनियम के अनुसार कंपनी के अधीन कोई सैनिक अथवा असैनिक अधिकारी निजी व्यापार तथा भारतीयों से किसी भी प्रकार का उपहार, दान या पारितोषिक ग्रहण नहीं कर सकते थे।
- इस अधिनियम में यह व्यवस्था की गई कि कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स अब 4 वर्ष के लिये चुना जाएगा और इनकी संख्या बढ़ाकर 24 कर दी गई, जिसमें एक चौथाई (6 सदस्य) प्रतिवर्ष अवकाश प्राप्त करेंगे।
- इस अधिनियम के द्वारा ब्रिटिश क्राउन का 'कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स' के माध्यम से कंपनी पर नियंत्रण और सशक्त हो गया। इसको भारत के राजस्व, नागरिक एवं सैन्य मामलों संबंधी जानकारी ब्रिटिश क्राउन के साथ साझा करना अनिवार्य कर दिया गया।
- कंपनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों का वेतन बढ़ा दिया गया।

1781 का संशोधनात्मक अधिनियम

- यह संशोधन अधिनियम 1773 के रेग्युलेटिंग एक्ट की विसंगतियों को दूर करने के लिये लाया गया।
- इसे 'एक्ट ऑफ सेटलमेंट' के नाम से भी जाना जाता है।
- इस अधिनियम के अनुसार कंपनी के पदाधिकारी अपने शासकीय रूप में किये गए कार्यों के लिये उच्चतम न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से बाहर हो गए।
- उच्चतम न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को और स्पष्ट किया गया तथा उसे कलकत्ता के सभी निवासियों पर लागू कर दिया गया।
- इस अधिनियम में यह प्रावधान किया गया कि, उच्चतम न्यायालय को अपनी आज्ञाएँ व आदेश लागू करते समय एवं सरकार को नियम व विनियम बनाते समय भारतीयों के धार्मिक तथा सांस्कृतिक रीति-रिवाजो को ध्यान में रखना होगा।
- अब गवर्नर जनरल की परिषद् द्वारा बनाए गए नियम को सर्वोच्च न्यायालय में पंजीकृत कराना आवश्यक नहीं था।
- कुल मिलाकर, 1781 का संशोधनात्मक अधिनियम कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के बीच शक्ति पृथक्करण की दिशा में बड़ा कदम था।

पिट्स इंडिया एक्ट, 1784

- सरकार का कंपनी के मामलों में नियंत्रण बढ़ गया।
- छह सदस्यीय नियंत्रण बोर्ड (Board of Control) का गठन किया गया तथा सभी असैनिक, सैनिक तथा राजस्व संबंधी मामलों को एक नियंत्रण बोर्ड के अधीन कर दिया गया। इसमें यह भी निर्दिष्ट था कि गवर्नर जनरल की परिषद् के सदस्य अनुबंधित सेवक (Covenanted Servant) ही होंगे।
- भारत में प्रशासन गवर्नर जनरल तथा उसकी चार के स्थान पर तीन सदस्यों वाली परिषद् के हाथ में दे दिया गया। यद्यपि उसे अभी भी बहुमत के आधार पर कार्य करना होता था।

इकाई VIII

- **उपनिवेशीय अर्थव्यवस्था**- बदलती संरचना, व्यापार की मात्रा और दिशा
- कृषि का विस्तार तथा वाणिज्यिकीकरण, भू-अधिकार, भू-बंदोबस्त, ग्रामीण ऋणग्रस्तता, भूमिहीन श्रम, सिंचाई और नहर व्यवस्था।
- उद्योगों का ह्रास–शिल्पकारों की बदलती सामाजिक–आर्थिक स्थितियाँ; वि–शहरीकरण; आर्थिक अपवहन; विश्व युद्ध और अर्थव्यवस्था।
- ब्रिटिश औद्योगिक नीति; मुख्य आधुनिक उद्योग; कारखाना कानून का स्वरूप; श्रम और मज़दूर संघ आन्दोलन।
- मौद्रिक नीति, बैंकिंग, मुद्रा और विनिमय, रेलवे तथा सड़क परिवहन, संचार–डाक और टेलीग्राफ।
- नूतन शहरी केंद्रों का विकास; नगर आयोजन और स्थापत्य की नूतन विशेषताएँ, शहरी समाज और शहरी समस्याएँ।
- अकाल, महामारी और सरकारी नीति।
- जनजाति और किसान आंदोलन।
- **संक्रमणकाल में भारतीय समाज**- ईसाई धर्म से संपर्क – ईसाई मिशन और मिशनरी; भारत की सामाजिक एवं आर्थिक प्रथाओं और धार्मिक धारणाओं की समालोचना; शैक्षिक तथा अन्य गतिविधियाँ।
- **नई शिक्षा–** सरकारी नीति; स्तर और विषयवस्तु; अंग्रेज़ी भाषा, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, लोक स्वास्थ्य एवं औषधि– आधुनिकतावाद की ओर।
- **भारतीय पुनर्जागरण–** सामाजिक–धार्मिक सुधार; मध्यम वर्ग का उद्भव, जातिगत संगठन और जातीय गतिशीलता।
- **स्त्रियों से संबंधित प्रश्न–** राष्ट्रवादी चर्चा; स्त्रियों के संगठन; स्त्रियों से संबंधित ब्रिटिश कानून, लिंग पहचान एवं संवैधानिक स्थिति।
- **प्रिंटिंग प्रेस–** पत्रकारिता संबंधी गतिविधि तथा लोकमत।
- भारतीय भाषाओं और साहित्यिक विधाओं का आधुनिकीकरण - चित्रकारी, संगीत और प्रदर्शन कलाओं का पुनर्स्थापन।

8.1 उपनिवेशीय अर्थव्यवस्था
(Colonial Economy)

भारतीय अर्थव्यवस्था पर ब्रिटिश नीतियों का प्रभाव मुगल शासक औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद ही सहज परिलक्षित होने लगा था। उत्तरवर्ती मुगल शासकों द्वारा तत्कालीन यूरोपीय व्यापारियों को दी गई उदारतापूर्ण रियायतों ने स्वदेशी व्यापारियों के हितों को नुकसान पहुँचाया। अंग्रेज़ों ने प्लासी (1757) और बक्सर (1764) युद्ध के बाद भारतीय व्यापार पर अपना एकाधिकार स्थापित कर लिया। फलत: भारतीय अर्थव्यवस्था अधिशेष तथा आत्मनिर्भरता मूलक अर्थव्यवस्था से औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में परिवर्तित हो गई।

अंग्रेज़ों की औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का उद्देश्य अपने उद्योगों के लिये भारत से कच्चा माल प्राप्त कर अपने उत्पादों को भारतीय बाज़ार में बेचना था। अंग्रेज़ों ने भारतीय अर्थव्यवस्था से संबंधित सभी पक्षों का केवल अपने हितों की पूर्ति हेतु प्रयोग किया। परिणामस्वरूप, भारत एक निर्यातक देश से आयातक देश बन गया।

भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विभिन्न चरण

उपनिवेशवाद एक विस्तारवादी अवधारणा है, जिसके तहत किसी देश का आर्थिक शोषण एवं उत्पीड़न होता है। इसके तहत एक राष्ट्र द्वारा किसी अन्य राष्ट्र की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना पर नियंत्रण किया जाता है। नियंत्रण करने वाला देश 'मातृदेश' कहलाता है। इस तरह, उपनिवेश के अंदर बनाई गई नीतियों का मुख्य लक्ष्य मातृदेश (औपनिवेशिक शक्ति) को लाभ पहुँचाना होता है। इस दृष्टि से ब्रिटिश ने अपने भारतीय उपनिवेश से आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिये समय-समय पर विभिन्न नीतियाँ बनाईं। भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद को तीन चरणों में विभक्त किया जा सकता है।

उपनिवेशवाद का प्रथम चरण : वाणिज्यिक पूंजीवाद का चरण (1757-1813)

- 1757 में 'प्लासी युद्ध' के बाद इंग्लैंड की 'ईस्ट इंडिया कंपनी' ने बंगाल पर प्रभुत्व स्थापित कर लिया। यहीं से भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद की शुरुआत मानी जाती है।
- उपनिवेशवाद के प्रथम चरण में ब्रिटिश कंपनी का पूरा ध्यान आर्थिक लूट पर ही केंद्रित रहा। फलत: इस चरण में व्यापारिक एकाधिकार के लिये इन्हें पुर्तगाली, डच और फ्राँसीसी कंपनियों से कई युद्ध लड़ने पड़े।

  इस चरण में ब्रिटिशों के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित थे–
  - भारत के व्यापार पर एकाधिकार करना।
  - राजनीतिक प्रभाव स्थापित कर राजस्व प्राप्त करना।
  - कम-से-कम मूल्यों पर वस्तुओं को खरीद कर यूरोप में उन्हें अधिक-से-अधिक मूल्यों पर बेचना।
  - अपने यूरोपीय प्रतिद्वंद्वियों को हरसंभव तरीके से बाहर निकालना।
- पूंजी निवेश के माध्यम से लाभ कमाना (यहाँ पूंजी निवेश से तात्पर्य है कि बंगाल से प्राप्त राजस्व से कंपनी द्वारा भारतीय वस्तुओं की खरीद कर उसको यूरोप में निर्यात कर मुनाफा कमाना।) वस्तुत: इसके माध्यम से अब भारतीय वस्तुओं को खरीदने के लिये इंग्लैंड से धन लाने की आवश्यकता नहीं रही।
- भारतीय प्रशासन, परंपरागत न्यायिक कानूनों, यातायात, संचार तथा औद्योगिक व्यवस्था में विशेष मौलिक परिवर्तन किये बगैर पूंजी प्राप्त करना।
- कंपनी ने आर्थिक कोष बढ़ाने के लिये विजित क्षेत्रों की स्थानीय जनता पर कर लगाए। प्लासी के युद्ध के बाद जीते गए क्षेत्रों (बंगाल, बिहार, उड़ीसा आदि) की सरकारी आय पर कंपनी का पूरा नियंत्रण स्थापित हो गया।
- ब्रिटिश की आर्थिक नीति से उद्योग-धंधों का ह्रास हुआ। परिणामत: अब राष्ट्रीय धन का एकमात्र स्रोत कृषि रह गया और अधिकतर जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहने लगी।
- किसानों से वसूली गई राशि (लगान के रूप में) अंग्रेज़ों द्वारा वस्तुओं और कीमती धातुओं के रूप में इंग्लैंड और यूरोप को निर्यात कर दी जाती थी। भारत की लूट इंग्लैंड में पूंजी संचय का अप्रत्यक्ष स्रोत थी।

इस प्रकार, उपनिवेशवाद के प्रथम चरण में कंपनी का एकमात्र उद्देश्य किसी तरह यहाँ से धन को लूटना था। प्रसिद्ध ब्रिटिश इतिहासकार पर्सिवल स्पीयर ने टिप्पणी की, *"अब बंगाल में खुला तथा बेशर्म लूट का काल आरंभ हुआ।"* 1765 से 1772 के काल को प्रसिद्ध भारतीय इतिहासकार के.एम. पणिक्कर ने 'डाकू राज्य' कहा है।

उपनिवेशवाद का द्वितीय चरण : औद्योगिक पूंजीवाद (1813-1858)

- 1813 में भारत के व्यापार से कंपनी का एकाधिकार समाप्त हो गया। तत्पश्चात् औद्योगिक पूंजीवाद द्वारा भारत के शोषण का नया रूप सामने आया। इस चरण में इंग्लैंड में हुई औद्योगिक क्रांति को ध्यान में रखकर नीतियाँ बनाई गईं। वस्तुत: इंग्लैंड में बड़े पैमाने पर उद्योगों की स्थापना हुई।
- विदित है कि 1765 से 1785 के बीच अनेक वैज्ञानिक आविष्कार हुए, जैसे- कताई की मशीन, स्टीम इंजन, पावरलूम, वाटरफ्रेम आदि। उद्योगों की स्थापना होने से जहाँ एक तरफ कच्चे माल एवं खाद्यान्न की आवश्यकता महसूस हुई, वहीं दूसरी तरफ कारखाना निर्मित उत्पादकों की बिक्री के लिये एक बड़े बाज़ार की आवश्यकता भी पड़ी। परिणामस्वरूप इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ब्रिटिश ने भारत में नई नीतियाँ लागू कीं।

8.2 जनजातीय और किसान आंदोलन
(Tribal and Peasant Movements)

भूमिका

ब्रिटिश हुकूमत और भारतीय शोषकों, जैसे- ज़मींदार, राजा-रजवाड़े, कुलीन वर्ग आदि के ख़िलाफ़ 18वीं सदी से ही सामान्य-नागरिक, कृषक तथा जनजातीय लोग अपना असंतोष प्रकट करने लगे थे। कृषक आंदोलनों का कारण ब्रिटिशों की भू-नीतियाँ एवं राजस्व की दमनात्मक वसूली आदि थी। यद्यपि अधिकांश विद्रोहों का पुलिस तथा सेना की मदद से दमन किया गया, परंतु भारतीय किसानों ने विभिन्न स्थानों पर अपना प्रतिरोध दर्ज कराया। जनजातीय विद्रोह का कारण उनके परंपरागत अधिकारों का हनन था। आदिवासियों का वन पर परंपरागत अधिकार था परंतु सरकार ने वन नीति के तहत उसे सरकारी संपत्ति घोषित कर दिया। आबकारी कर, नमक कर जैसे करों की दमनकारी वसूली भी इन विद्रोहों का कारण बनी। ईसाई धर्म प्रचारकों ने भारतीय संस्कृति पर प्रहार किया। फलतः समय-समय पर विभिन्न जन विद्रोह हुए।

प्रमुख जन विद्रोह

संन्यासी विद्रोह (बंगाल, 1770-1820)
(कुछ स्रोतों में 1763-1800)

- इस आंदोलन का प्रमुख कारण अत्यधिक शोषण, अकालों की निरंतरता, अंग्रेज़ों की लूटखसोट, आर्थिक मंदी व राजनीतिक अशांति एवं तात्कालिक कारण अंग्रेज़ों द्वारा हिंदू व मुस्लिम तीर्थ स्थानों की यात्रा पर लगाया गया प्रतिबंध था।
- संन्यासी प्रभाव क्षेत्र ढाका, रंगपुर तथा मैमनपुर थे।
- इस आंदोलन के नेतृत्वकर्त्ता मंजू शाह एवं देवी चौधरानी थे।
- 1770 के अकाल के बाद तो इतना तीव्रगामी विद्रोह किया गया कि 1773 में विद्रोहियों ने समानांतर सरकार बना ली।
- बंकिम चंद्र चटर्जी द्वारा लिखित उपन्यास 'आनंदमठ' का कथानक संन्यासी विद्रोह पर आधारित है।
- संन्यासी विद्रोह को दबाने का श्रेय 'वारेन हेस्टिंग्स' को दिया जाता है।

फकीर विद्रोह (बंगाल, 1776-77)

- यह एक धार्मिक विद्रोह था, जो घुमक्कड़ मुसलमान फकीरों के गुट द्वारा किया गया था।
- इस विद्रोह के नेता मज़नूमशाह ने अंग्रेज़ी शासन के विरुद्ध विद्रोह करते हुए ज़मींदारों और किसानों से धन की वसूली की।
- मज़नूमशाह की मृत्यु के पश्चात् आंदोलन की बागडोर चिरागअली शाह ने संभाली। राजपूत, पठान एवं सेना के भूतपूर्व सैनिकों ने आंदोलन को सहयोग प्रदान किया।
- भवानी पाठक व देवी चौधरानी जैसे हिंदू नेताओं ने इस आंदोलन की सहायता की।
- कालांतर में इस आंदोलन के समर्थकों ने हिंसक गतिविधियाँ प्रारंभ कर दीं, जो अंग्रेज़ी फैक्ट्रियों एवं सैनिक साज़ो-सामान पर केंद्रित थीं।
- 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों तक अंग्रेज़ी सेनाओं ने आंदोलन को कठोरतापूर्वक दबा दिया।

पाइक विद्रोह (1817-1825)

- यह विद्रोह उड़ीसा की 'पाइक' जाति द्वारा ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के विरुद्ध एक सशस्त्र विद्रोह था। यह ओडिशा के खुर्दा ज़िले से शुरू हुआ।
- बक्शी जगबंधु विद्याधर के नेतृत्व में इस विद्रोह को अंजाम दिया गया जो कि खुर्दा के राजा के सैन्य कमांडर थे।
- पाइक जाति को परंपरागत रूप से खुर्दा के राजा द्वारा सैन्य गतिविधियों के लिये कर मुक्त भूमि का आवंटन किया जाता था। अंग्रेज़ों ने इस पर रोक लगा दी। अन्य कारणों में भारतीयों से अंग्रेज़ों द्वारा जबरन वसूली और उत्पीड़न भी शामिल रहा, जिससे यह आंदोलन आक्रोशित हो उठा।
- 1825 तक इस आंदोलन का पूर्णतः दमन कर दिया गया।

नोटः केंद्रीय बजट 2017-18 में इस विद्रोह के 200 साल पूरे होने पर एक भव्य समारोह मनाने की घोषणा की गई।

अहोम विद्रोह (1828-1833; असम)

- 1824 में बर्मा-युद्ध के बाद अंग्रेज़ों ने उत्तरी असम पर अधिकार कर लिया था, जिसे असम के अहोम-वंश के उत्तराधिकारियों ने नापसंद किया और ईस्ट इंडिया कंपनी से असम छोड़कर चले जाने को कहा, परिणामस्वरूप विद्रोह फूट पड़ा।
- 1828 से 1830 तक अहोमों ने गोमधर कुँवर के नेतृत्व में कंपनी के विरुद्ध विद्रोह किया, परंतु विद्रोह सफल न हो सका। अंग्रेज़ अधिकारियों ने गोमधर कुँवर को गिरफ्तार कर अंततः विद्रोह को दबा दिया।
- 1830 में अहोमों ने कुमार रूपचंद के नेतृत्व में दूसरे विद्रोह की योजना बनाई, परंतु इससे पहले विद्रोह होता, कंपनी ने शांति की नीति अपनाते हुए 1833 में उत्तरी असम के प्रदेश महाराज पुरंदर सिंह को दे दिये। इस तरह अहोम विद्रोह शांत हो गया।

फराज़ी/फरैज़ी विद्रोह (1838-1857; बंगाल)

- फरैज़ी विद्रोह का सूत्रपात शरीयतुल्ला द्वारा बंगाल में किया गया। इसका प्रचार-प्रसार शरीयतुल्ला के पुत्र मोहम्मद मोहसिन (दादू मियाँ) ने किया।

8.3 संक्रमण काल में भारतीय समाज
(Indian Society in Transition)

ईसाई धर्म से संपर्क

- एक अनुमान के अनुसार यीशु मसीह के प्रथम 12 शिष्यों में से एक संट थामस ईसाई धर्म के प्रचार के लिये मालाबार तट पर प्रथम शताब्दी ईस्वी में ही आया था और उसने ईसाई धर्म के प्रचार के दौरान पूरे दक्षिण भारत की यात्रा की और उसका देहांत भी भारत में ही हुआ।
- इसके भी पूर्व अनुमान हैं कि सीरियाई ईसाई दक्षिण भारत में व्यापार के सिलसिले में बस चुके थे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतीयों का ईसाई धर्म से संपर्क उसके जन्म-शताब्दी में ही हो गया था जिसे आगे बढ़ाया पुर्तगालियों ने।

ईसाई मिशन और मिशनरी

- 15वीं शताब्दी के अंतिम दशक में पुर्तगाली भारत के पश्चिमी तट पर व्यापार करने के लिये पहुँचे और शीघ्र ही पश्चिमी तट के बंदरगाहों पर नियंत्रण स्थापित कर लिया, जिसके पश्चात् कैथोलिक मिशनरी भारत में ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार के लिये आने लगे। 16वीं शताब्दी में सर्वप्रथम जेसुइट संट फ्राँसिस जेवियर अपने अनुयायियों के साथ भारत पहुँचे, जिन्होंने अपने धर्म प्रचार के दौरान भारत में कई स्कूल और कॉलेज खोले जिसके कारण आज भी अनेक स्कूल और कॉलेजों का नाम संट जेवियर है।
- पुर्तगालियों के अधीन गोवा में ईसाई पादरियों ने वहाँ के स्थानीय निवासियों का बलपूर्वक धर्म-परिवर्तन भी कराया जिसका कड़ा प्रतिरोध भारतीय जनमानस ने किया। पुर्तगाली साम्राज्य के विस्तार में अवरोध के कारणों में यह भी एक प्रमुख कारण रहा। 19वीं शताब्दी से प्रोटेस्टेंट चर्च के मिशन भी भारत पहुँचने लगे। लेकिन आरंभ में ईस्ट इंडिया कंपनी इन ईसाई मिशनरियों को कोई सहयोग इसलिये नहीं देती थी कि कहीं उनके क्रिया-कलापों से भारतीयों में धार्मिक असंतोष न फैले और उसके कारण कंपनी के शासन का राजनीतिक विरोध लोग न करने लगें।
- यही कारण था कि 19वीं शताब्दी में आने वाले मिशनरियों को कंपनी के अधिकार क्षेत्र के बाहर रहना पड़ा, यथा ब्रिटिश प्रोटेस्टेंट मिशनरी विलियम केरी को कंपनी क्षेत्राधिकार के बाहर श्रीरामपुर में रहना पड़ा।
- 1813 के चार्टर एक्ट द्वारा ब्रिटिश भारत में ईसाई मिशनरियों को बसने, संपत्ति खरीदने और ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार की अनुमति दे दी गई। इस प्रावधान के पश्चात् ब्रिटिश भारत में ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार की गतिविधियाँ बढ़ गईं।

भारत की सामाजिक एवं आर्थिक प्रथाओं और धार्मिक धारणाओं की समालोचना

- ईसाई मिशनरियों ने भारतीयों में अपने धर्म के प्रचार-प्रसार के लिये भारतीय समाज में फैली कुरीतियों की आलोचना की। उन्होंने सर्वप्रथम भारतीयों के धार्मिक रीति-रिवाज पर प्रहार किया। भारतीयों में फैले जात-पात, छुआछूत, अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियों और हिंदुओं के अधिसंख्य देवी-देवताओं की खुलकर आलोचना की। उन्होंने बाल विवाह, सती प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या, शिशु बलि आदि का कड़ा विरोध किया। साथ-ही-साथ सकारात्मक रूप में सामाजिक भेदभाव की समाप्ति पर ज़ोर दिया। सभी को एक परमात्मा की संतान बताया। भारतीय स्त्रियों की सामाजिक दशा को सुधारने के लिये उनकी शिक्षा पर विशेष बल दिया। राजा राममोहन राय के सती प्रथा के विरोध में चलाए गए आंदोलन का मिशनरियों ने खुलकर समर्थन किया। इसके अलावा उन्होंने विधवा विवाह का भी समर्थन किया।
- उच्च से लेकर निम्न वर्ग तक सभी के लिये शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की। सभी के लिये अस्पताल खोले। प्राकृतिक आपदाओं के समय लोगों की मदद की और सुदूर भारत के भीतरी भागों में जाकर भारतीयों को शिक्षित किया और अपने धर्म का प्रचार-प्रसार किया। मिशनरियों द्वारा शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में किये गए प्रयासों से भारतीय अर्थव्यवस्था को भी सकारात्मक गति मिली। उनके द्वारा शिक्षित भारतीयों को न केवल कंपनी के अधीन नौकरी मिली बल्कि शिक्षित भारतीयों ने वाणिज्य-व्यापार में भी उन्नति प्राप्त की।

शैक्षिक तथा अन्य गतिविधियाँ

- मिशनरियों ने मुख्यतया शैक्षिक गतिविधियों में बढ़-चढ़कर भागीदारी की और संपूर्ण भारत में अनेक स्कूल एवं कॉलेज स्थापित किये। सीरामपुर (श्रीराम पुर), बंगाल में शिक्षा के प्रचार के लिये अपना प्रमुख केंद्र स्थापित किया। विलियम कैरी, जोशुआ मार्शमैन और विलियम वार्ड ने मिलकर सीरामपुर मिशन को आगे बढ़ाया।
- शैक्षिक क्रियाकलापों के अलावा मिशनरियों ने प्रिंटिंग प्रेस स्थापित किये। बाइबिल का अनुवाद भारतीय भाषाओं में किया और अन्य शैक्षिक पुस्तकों का भी प्रकाशन किया।
- इसके अलावा यीशु मसीह के 'सेवा उपदेश' पर चलते हुए उन्होंने अस्पताल खोले और आधुनिक चिकित्सा पद्धति को भारत में आरंभ किया जहाँ सबका इलाज किया जाता था।

नई शिक्षा

भारत में राजनीतिक चेतना का विकास 19वीं शताब्दी की महत्त्वपूर्ण घटना है। ब्रिटिश शासन ने भारत में अपनी सत्ता बनाए रखने के लिये

8.4 भारतीय पुनर्जागरण (Indian Renaissance)

सामाजिक-धार्मिक सुधार

ब्रिटिश शासन के दौरान शुरू की गई नई सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक प्रणाली ने भारतीय समाज के आधारभूत ढाँचे में आमूलचूल परिवर्तन किया। नई एवं परंपरागत व्यवस्था के संघर्ष ने भारतीय समाज में आंतरिक उथल-पुथल को जन्म दिया। भारत में पाश्चात्य शिक्षा का प्रारंभ भी सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण का एक महत्त्वपूर्ण कारण था। यद्यपि कंपनी ने भारत के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप के प्रति संयम की नीति का पालन किया, लेकिन ऐसा उसने अपने औपनिवेशिक हितों के लिये किया। पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित लोगों ने हिंदू सामाजिक संरचना, धर्म, रीति-रिवाज व परंपराओं को तर्क की कसौटी पर कसना आरंभ कर दिया। परिणामत: सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों का जन्म हुआ। भारतीय समाज को पुनर्जीवन प्रदान करने का प्रयत्न प्रबुद्ध भारतीय सामाजिक एवं धार्मिक सुधारकों, सुधारवादी ब्रिटिश गवर्नर जनरलों एवं पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार ने किया।

भारत का सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति मानी जाती है। जब हमारा समाज और धर्म दोनों गतिहीन हो चला तो इस आंदोलन ने इस स्थिरता को तोड़ने का काम किया। 19वीं सदी में सुधार मुख्यत: नारी केंद्रित और 20वीं सदी में निम्न जाति केंद्रित रहे।

सुधार आंदोलन के कारण

- 1813 के चार्टर एक्ट के तहत ईसाई मिशनरियों का भारत में आगमन हुआ। इन प्रचारकों ने सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार कर हिंदू व इस्लाम धर्म की मान्यताओं एवं व्यवहार पर चोट की। इसके पीछे निहित कारणों में भारतीय समाज का आधुनिकीकरण करना नहीं वरन ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं के लिये खरीददार तैयार करना तथा उपयोगितावादी विचारधारा का प्रयोग कर भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रति निकृष्टता का भाव पैदा करना था। प्रतिक्रियास्वरूप अपने धर्म की रक्षा एवं सामाजिक बुराइयों को दूर करने हेतु अनेक सामाजिक-धार्मिक आंदोलन हुए।
- बौद्धिक विकास की अनुकूल परिस्थितियों से आधुनिक चेतना के साथ समाज का शिक्षित वर्ग सामने आया, जिन्होंने धार्मिक, सामाजिक आडंबरों के प्रति सुधारवादी रवैया अपनाया और उन्हें समसामयिक संदर्भ में उपयोगी व युक्ति-संगत बनाने का प्रयास प्रारंभ किया। इन आंदोलनों को नेतृत्व देने में कुछ संगठनों और व्यक्तियों का महत्त्वपूर्ण योगदान था।

हिंदू धर्म से संबंधित सुधारक संस्थाएँ

ब्रह्म समाज

बंगाल में प्रारंभ हुए समाज सुधार आंदोलनों का नेतृत्व राजा राममोहन राय ने किया। इन्हें भारत में नवजागरण का अग्रदूत, सुधार आंदोलनों का प्रवर्तक, आधुनिक भारत का पिता, नवप्रभात का तारा एवं भारतीय पत्रकारिता का जनक कहा जाता है। राजा राममोहन राय प्राच्य और पाश्चात्य चिंतन के मिले-जुले रूप के प्रतिनिधि थे।

- 1828 में राजा राममोहन राय ने ब्रह्म सभा की स्थापना कलकत्ता में की, जिसे बाद में 'ब्रह्म समाज' कहा गया। ब्रह्म समाज के मुख्य उद्देश्य 'हिंदू धर्म' में सुधार लाना, सभी धर्मों की अच्छाइयों को अपनाना, मूर्ति पूजा का विरोध, एक ब्रह्म की पूजा का उपदेश देना आदि थे। उन्होंने एकेश्वरवाद का समर्थन कर धर्मों की आपसी एकता पर ज़ोर दिया। ब्रह्म समाज के सिद्धांतों और दृष्टिकोण के मुख्य आधार थे- मानव-विवेक (तर्क-शक्ति), वेद व उपनिषद्।
- राजा राममोहन राय धार्मिक, दार्शनिक व सामाजिक दृष्टिकोण में इस्लाम के एकेश्वरवाद, सूफीमत के रहस्यवाद, ईसाई धर्म की आचार शास्त्रीय नीतिपरक शिक्षा और पश्चिम के आधुनिक देशों के उदारवादी-बुद्धिवादी सिद्धांतों के समर्थक थे।
- सामाजिक क्षेत्र में राजा राममोहन राय हिंदू समाज की कुरीतियों- सती प्रथा, बहुपत्नी प्रथा, वेश्यागमन, जातिवाद, बाल विवाह आदि के घोर विरोधी थे। विधवा पुनर्विवाह का इन्होंने समर्थन किया।
- धार्मिक क्षेत्र में उन्होंने मूर्ति पूजा की आलोचना करते हुए, अपने पक्ष को वेदोक्तियों के माध्यम से सिद्ध करने का प्रयास किया। इन्होंने कर्मकांड का विरोध किया तथा धार्मिक ग्रंथों की व्याख्या के लिये पुरोहित वर्ग को अस्वीकार किया। उन्होंने यह भी कहा कि अगर धर्म सामाजिक सुधार की अनुमति नहीं देते तो उसे बदल दिया जाना चाहिये।
- एकेश्वरवादी मत के प्रचार हेतु उन्होंने 1815 में 'आत्मीय सभा' का भी गठन किया। 1822 में फारसी भाषा में उन्होंने मिरात-उल-अखबार (मिरातुल अखबार) का प्रकाशन किया। कलकत्ता यूनिटेरियन कमेटी का गठन 1823 में राजा राममोहन राय, द्वारकानाथ टैगोर और विलियम एडम द्वारा किया गया।
- 1821 में बांग्ला भाषा में 'संवाद कौमुदी' का भी प्रकाशन किया। सती-प्रथा के विरोध के लिये इन्होंने अपनी इस पत्रिका का उपयोग किया।
- राजा राममोहन राय ने डच घड़ीसाज डेविड हेयर के सहयोग से 1817 में कलकत्ता में 'हिंदू कॉलेज' की स्थापना की। 1825 में उन्होंने कलकत्ता में 'वेदांत कॉलेज' की स्थापना की।

नोट: उल्लेखनीय है कि राजा राममोहन राय ने 1826 के जूरी अधिनियम का घोर विरोध किया था।

8.5 आधुनिक भारतीय संस्कृति
(Modern Indian Culture)

भारतीय भाषाओं और साहित्यिक विधाओं का आधुनिकीकरण

- भाषा शब्द संस्कृत की 'भाष्' धातु से उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है– वाणी की अभिव्यक्ति।
- आधुनिक काल में भारतीय भाषाओं में काफी बदलाव हुए। चूँकि भाषा में लोगों का रहन-सहन, समाज, अर्थव्यवस्था, धर्म आदि की अभिव्यक्ति होती है, इसलिये आधुनिक काल में राजनीति, समाज, अर्थव्यवस्था और धर्म में होने वाले बदलावों से भाषा भी प्रभावित हुई।
- हिंदी भाषा तो सर्वप्रथम आधुनिक काल में ही अपना वर्तमान स्वरूप ग्रहण की जब भारतेंदु हरिश्चंद्र के समय में वह नई चाल में ढली। हिंदी पट्टी में जहाँ आधुनिक काल के पहले काव्य भाषा का प्रयोग किया जाता था, वहीं आधुनिक काल में गद्य का प्रयोग आरंभ हुआ और उसकी कई विधाएँ यथा– नाटक, कहानी, निबंध, उपन्यास, आलोचना आदि भाषा में लिखे जाने लगे।
- वर्तमान में भारत की 6 भाषाओं को शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्राप्त है–

तमिल

तमिल द्रविड़ भाषा परिवार में सम्मिलित एक प्रमुख भाषा है। संविधान की 8वीं अनुसूची में शामिल इस भाषा को 2004 में 'शास्त्रीय भाषा' का दर्जा प्रदान किया गया है। अति प्राचीन भाषा होते हुए भी यह लगभग 2500 वर्षों से वर्तमान समय तक जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त हो रही है।

इस भाषा के आरंभिक शिलालेख तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास के हैं। तमिल भाषा में रचित सर्वाधिक प्राचीन साहित्य संगम साहित्य है। संगम साहित्य के अलावा इस भाषा में उपलब्ध अन्य महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कृतियाँ हैं- तिरुक्कुरल, शिलप्पादिकारम् तथा मणिमेखलै।

संस्कृत

संस्कृत विश्व की सबसे पुरानी उल्लिखित भाषाओं में से एक है। यह हिंद-आर्य भाषा परिवार से संबंधित है। संस्कृत का संबंध अवेस्ता एवं पुरानी फारसी भाषा से भी माना गया है। वैदिक काल में रचित 'ऋग्वेद' को इस भाषा में रचित प्राचीनतम ग्रंथ माना जाता है। हिंदू धर्म से संबंधित लगभग सभी धर्मग्रंथों की रचना संस्कृत भाषा में की गई है।

संस्कृत भाषा की समृद्ध ऐतिहासिक विरासत को देखते हुए भारत सरकार ने 2005 में इसे शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्रदान किया।

तेलुगू

द्रविड़ भाषा परिवार में सम्मिलित तेलुगू आंध्र प्रदेश और तेलंगाना की राजभाषा है। तेलुगू भाषा के कुछ शब्द पहली बार पहली सदी में हाल द्वारा रचित 'गाथासप्तशती' में मिलते हैं। इस भाषा की प्राचीनता एवं समृद्ध साहित्यिक विरासत को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार ने इसे 2008 में शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्रदान किया।

कन्नड़

भारत की 22 आधिकारिक भाषाओं में सम्मिलित कन्नड़ भाषा द्रविड़ भाषा परिवार में सम्मिलित है। यह भाषा लगभग 2500 वर्षों से उपयोग में है। आरंभिक कन्नड़ भाषा का लिखित रूप 450 ई. में हेलेविड नामक स्थान से प्राप्त शिलालेख में मिला है। कन्नड़ भाषा में उपलब्ध सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ 'कविराजमार्ग' है।

शास्त्रीय भाषा के लिये निर्धारित मानदंडों को पूरा करने के कारण 2008 में इसे तेलुगू भाषा के साथ ही शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्रदान किया गया।

मलयालम

द्रविड़ भाषा परिवार की एक प्रमुख भाषा मलयालम भाषा एवं लिपि के दृष्टिकोण से तमिल के काफी करीब है। 12वीं सदी में लिखित 'रामचरितम्' को मलयालम भाषा का आदिकाव्य माना जाता है। 2013 में इसे भारत सरकार द्वारा शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्रदान किया गया।

ओडिया

भारतीय संविधान की 8वीं अनुसूची में सम्मिलित ओडिया भाषा भारत के ओडिशा प्रांत में बोली जाने वाली भाषा है। भाषा परिवार के दृष्टिकोण से ओडिया एक आर्य भाषा है तथा बांग्ला, नेपाली, असमिया एवं मैथिली से इसका निकट संबंध है। ओडिया भाषा के प्रथम महाकवि सरला दास थे। इन्होंने देवी दुर्गा की स्तुति हेतु 'चंडी पुराण' एवं 'बिलंका रामायण' की रचना की थी। 20 फरवरी, 2014 को केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा ओडिया भाषा को शास्त्रीय भाषा का दर्जा देने संबंधी निर्णय के पश्चात् यह छठी ऐसी भाषा बन गई, जिसे शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्राप्त है।

मध्यकाल में हिंदी साहित्य का विकास

एक भाषा के रूप में हिंदी का विकास संस्कृत एवं विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं के मिलने से हुआ। विद्वानों के अनुसार, हिंदी की उत्पत्ति का काल सातवीं से दसवीं शताब्दी के मध्य था। वीरगाथा काल (आदिकाल) में रचित साहित्य में हिंदी भाषा का व्यापक रूप से प्रयोग हुआ है किंतु हिंदी भाषा एवं साहित्य का चरम उत्कर्ष भक्तिकाल में देखने को मिला।

इकाई IX

- **भारतीय राष्ट्रवाद का उत्थान:** राष्ट्रवाद का सामाजिक एंव आर्थिक आधार।
- भारतीय नेशलन कांग्रेस का जन्म, भारतीय नेशनल कांग्रेस के सिद्धांत और कार्यक्रम, 1885–1920 : प्रारम्भिक राष्ट्रवादी, स्वाग्रही राष्ट्रवादी और आंदोलनकारी।
- स्वदेशी और स्वराज।
- गांधीवादी जन आंदोलन; सुभाष चंद्र बोस और आई.एन.ए.; राष्ट्रीय आंदोलन में मध्य वर्ग की भूमिका; राष्ट्रीय आंदोलन में स्त्रियों की भागीदारी।
- वामपंथी राजनीति।
- दलित वर्ग आंदोलन
- साम्प्रदायिक राजनीति; मुस्लिम लीग एवं पाकिस्तान की उत्पत्ति।
- स्वतंत्रता और विभाजन की ओर।
- **स्वतंत्रता के पश्चात् भारत :** विभाजन की चुनौतियाँ; भारतीय रजवाड़ों की रियासतों का एकीकरण; कश्मीर, हैदराबाद तथा जूनागढ़।
- बी.आर. अम्बेडकर – भारतीय संविधान का निर्माण, इसकी विशेषताएँ।
- अधिकारी वर्ग का ढाँचा।
- नई शिक्षा नीति।
- आर्थिक नीतियाँ और नियोजन प्रक्रिया; विकास, विस्थापन और जनजातीय मुद्दे।
- राज्यों का भाषायी पुनर्गठन; केंद्र-राज्य संबंध।
- **विदेश नीति संबंधी पहल :** पंचशील; भारतीय राजनीति की गत्यात्मकता; आपातकाल; उदारीकरण, भारतीय अर्थव्यवस्था का निजीकरण तथा वैश्वीकरण।

9.1 भारतीय राष्ट्रवाद का उत्थान (Rise of Indian Nationalism)

राष्ट्रवाद का सामाजिक आधार

- 18वीं सदी का भारतीय समाज तमाम कुरीतियों का शिकार था। पश्चिमी ज्ञान के आगमन ने भारतीय समाज की जड़ता को तोड़ने का कार्य किया। यूरोपीय पुनर्जागरण के ज्ञान ने भारतीय विचारकों को आंदोलित किया और उन्होंने भारतीय समाज में बदलाव लाने का प्रयास आरंभ किया। सबसे पहले धर्म और समाज के अंतर्संबंध को ध्यान में रखकर सामाजिक सुधार के साथ-साथ धार्मिक सुधार के मुद्दों को उठाया गया या सामाजिक सुधार के लिये धार्मिक ग्रंथों से साक्ष्य प्रस्तुत किये गए।
- इस क्रम में राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के बारे में लिखा कि कोई प्राचीन धर्मग्रंथ सती प्रथा के पक्ष में साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करता। इसी तरह विधवा-विवाह के पक्ष में ईश्वर चंद्र विद्यासागर ने पौराणिक ग्रंथों से सबूत जुटाए तथा दयानन्द सरस्वती ने अपने जातिवाद-विरोध को वैदिक आधार प्रदान किया।
- धर्म से आबद्ध समाज को बदलने के लिये धार्मिक ग्रंथों का सहारा इसलिये लेना पड़ा ताकि लोगों का विश्वास आसानी से नए विचारों पर लाया जा सके।
- कई दफा बिना धार्मिक ग्रंथों का साक्ष्य दिये भी नए विचारों को प्रोत्साहित किया गया। बाल विवाह और बहु विवाह का विरोध करने के लिये अक्षय कुमार दत्त ने धार्मिक स्वीकृति की खास परवाह नहीं की।
- जाति प्रथा को मुख्य रूप राष्ट्रवाद का दुश्मन माना गया। ज्योतिबा फुले और नारायण गुरु ने इसका ज़बरदस्त विरोध किया। नारायण गुरु ने ही आह्वान किया कि मानवमात्र के लिये एक धर्म, एक जाति और एक ईश्वर जिसे उनके शिष्य ने आगे बढ़ाया– 'मानव मात्र के लिये कोई धर्म नहीं, कोई जाति नहीं, कोई ईश्वर नहीं'।
- महिलाओं को बराबरी का दर्जा देने के लिये अनथक प्रयास किये गए। कहा गया कि– 'जिस देश में महिलाएँ उपेक्षित हों, वह देश सभ्यता के क्षेत्र में कभी भी उल्लेखनीय प्रगति नहीं कर सकता।' इस प्रकार राष्ट्रवाद के विकास में सामाजिक सुधारों की महत्ता को रेखांकित किया जा सकता है।

राष्ट्रवाद का आर्थिक आधार

- 19वीं सदी के आरंभ में भारतीय बुद्धिजीवी ब्रिटिश शासन का समर्थन इस आशा में कर रहे थे कि वह भारत का पुनर्निर्माण करेगा जिससे भारत एक आधुनिक देश बन सकेगा।
- लेकिन 1860 के बाद भारतीय बुद्धिजीवियों का यह स्वप्न बिखरने लगा। अब ब्रिटिश आर्थिक शोषण का विश्लेषण किया जाने लगा। इस कार्य को सफलतापूर्वक अंजाम देने वाले थे– ग्रैंड ओल्ड मैन ऑफ इंडिया दादा भाई नौरोजी, न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानाडे और रमेश चंद्र दत्त।
- उनके अनुसार उपनिवेशवाद अब उन्मुक्त व्यापार और विदेशी पूंजी निवेश के ज़रिये शोषण कर रहा है। उसने भारत की हैसियत महज़ एक कच्चे माल के आपूर्तिकर्त्ता की बना दी है।
- दादाभाई नौरोजी ने भारत एवं ब्रिटेन के लोगों को लगातार इससे अवगत कराया कि "भारत भूख से मर रहा है।" इन आर्थिक विश्लेषकों ने लोगों को बताया कि गरीबी मानव जनित है, इसलिये इसे समझ कर, इसके कारणों को दूर कर इसे समाप्त किया जा सकता है। आर.सी. दत्त के अनुसार, "अगर भारत आज गरीब है, तो इसके पीछे सिर्फ आर्थिक कारण है।" आर्थिक विश्लेषकों ने गरीबी की समस्या को राष्ट्रीय विकास की समस्या कहा। इस मुद्दे को एक व्यापक राष्ट्रीय मुद्दा बनाया गया जिससे विभिन्न क्षेत्रों, धर्मों और जातियों में बँटे भारतीय समाज को एकजुट करने में मदद मिली।
- आर्थिक विकास के लिये न्यायमूर्ति रानाडे के विचार से, 'स्कूलों और कॉलेजों की बजाए कारखाने कहीं ज़्यादा प्रभावशाली ढंग से राष्ट्रीय गतिविधियों को जन्म दे सकते हैं।'
- औद्योगीकरण के साथ-साथ इन आर्थिक विश्लेषकों का ज़ोर इस बात पर भी था कि औद्योगीकरण भारतीय पूंजी पर आधारित होना चाहिये, न कि विदेशी पूंजी पर। दादाभाई नौरोजी के अनुसार, 'विदेशी पूंजी भारतीय संसाधनों की लूट और शोषण का ज़रिया है।'
- आरंभिक राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने भारतीय पूंजी व संपत्ति के निकास के मुद्दे को केंद्र बिंदु बनाया। उनके अनुसार भारतीय पूंजी का एक बड़ा हिस्सा ब्रिटिश अधिकारी के वेतन एवं पेंशन, भारत सरकार के कर्ज़ एवं ब्याज, ब्रिटिश पूंजी पर लाभ और ब्रिटेन को किये गए भारत सरकार के व्यय के रूप में चला जाता है। यह रकम भारत की कुल बचत के एक-तिहाई से अधिक है। इसे रोकने के लिये भारत सरकार की नौकरियों में अधिकाधिक भारतीयों की नियुक्ति और भारत का औद्योगीकरण भारतीय पूंजी के आधार पर करने की मांग की गई।
- इन अर्थशास्त्रियों ने इस प्रकार भारत की गरीबी के कारणों की न केवल पहचान की बल्कि उसे दूर करने के उपाय भी सुझाए और आर्थिक सुधारों की मांग के साथ-साथ इसे लागू करने के लिये स्वशासन की मांग भी ज़ोर-शोर से उठाया। दादाभाई नौरोजी ने अंतर्राष्ट्रीय सोशलिस्ट कांग्रेस के 1904 के सम्मेलन में भारत को 'स्वशासन' और दूसरे ब्रिटिश उपनिवेशों की तरह का दरजा दिये जाने की मांग रखी। 1905 में कांग्रेस के बनारस अधिवेशन में उन्होंने

9.2 गांधीवादी जन-आंदोलन (Gandhian Mass Movements)

1919-1947 के काल को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के काल का 'तृतीय चरण' या 'गांधी युग' के नाम से जाना जाता है। यह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का अंतिम चरण था। स्वतंत्रता संग्राम के पहले दो चरणों में नरमपंथी एवं गरमपंथी दलों के नेताओं के नेतृत्व में स्वतंत्रता आंदोलन चलाया गया। वहीं तीसरे चरण में महात्मा गांधी स्वतंत्रता आंदोलन के केंद्र बिंदु रहे। इस युग के राष्ट्रीय आंदोलन ने जनसंघर्ष का रूप धारण कर लिया। राष्ट्रवादियों, क्रांतिकारियों, सैनिकों, किसानों, मज़दूरों, सामान्यजन सभी ने राष्ट्रीय आंदोलन में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

इस काल में कांग्रेस ने पहले तो ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग और फिर अहिंसात्मक संघर्ष की नीति अपनाई, जिसके तीन निरंतर प्रगतिशील चरण-असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन थे।

इस चरण में हिंदू-मुस्लिम मतभेद अपने चरम स्तर पर पहुँच गए। परिणामत: 1940 में जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग ने पृथक् राष्ट्र 'पाकिस्तान' की मांग की। 1942 में 'करो या मरो' नारे के साथ 'अंग्रेज़ों भारत छोड़ो' आंदोलन चलाया गया। अंतत: भारत के राष्ट्रीय आंदोलन की विजय हुई और 15 अगस्त, 1947 को देश स्वतंत्र हो गया।

गांधी : सामान्य परिचय

- गांधीजी का जन्म 2 अक्तूबर, 1869 को गुजरात के एक संपन्न परिवार में पोरबंदर नामक स्थान पर हुआ था। वकालत की पढ़ाई इंग्लैंड से पूरी करने के बाद गांधीजी 1892-1893 में दक्षिण अफ्रीका में व्यापार करने वाले एक भारतीय मुसलमान व्यापारी दादा अब्दुल्ला का मुकदमा लड़ने के लिये डरबन (दक्षिण अफ्रीका) चले गए। इस मुकदमे में इन्होंने सफलता हासिल की।
- इस दौरान इन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के प्रति रंगभेद नीति को स्पष्ट रूप से महसूस किया। वहाँ प्रत्येक भारतीय को पंजीकरण प्रमाण पत्र लेना और यह प्रमाण पत्र हर समय अपने पास रखना आवश्यक था। गांधीजी ने इस संबंध में 'एशियाटिक रजिस्ट्रेशन एक्ट' का विरोध किया।
- विदित है कि डरबन से प्रिटोरिया जाते समय गांधीजी को अपमानित किया गया और यहीं से उन्हें भारतीयों के नेतृत्व की प्रेरणा मिली।
- 1894 में गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में 'नटाल इंडियन कांग्रेस' की स्थापना की और रंगभेद की नीति के विरुद्ध आंदोलन भी शुरू किया। अपने सहयोगी जर्मन शिल्पकार 'कॉलेनबाख' की मदद से 'टॉलस्टॉय फार्म' की स्थापना की। वहाँ रह कर उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में 'इंडियन ओपीनियन' अखबार का प्रकाशन किया तथा 1904 में 'फीनिक्स आश्रम' की स्थापना की।
- उनके प्रयासों व आंदोलन के कारण दक्षिण अफ्रीकी सरकार द्वारा सन् 1914 में अधिकांश रंगभेद कानूनों को रद्द कर दिया गया।
- 1909 में पश्चिमी मूल्यों की आलोचना करते हुए 'हिंद स्वराज' नामक पुस्तक लिखी जिसमें सभी क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनने की सलाह दी गई।

गांधीजी का भारत आगमन

- जनवरी 1915 में गांधीजी दक्षिण अफ्रीका से वापस भारत लौटे। यहाँ गोपाल कृष्ण गोखले के विचारों से वे सर्वाधिक प्रभावित हुए और कालांतर में गोखले को गांधीजी ने अपना राजनीतिक गुरु मान लिया।
- गांधीजी जिस समय भारत में आए, उस समय प्रथम विश्वयुद्ध चल रहा था। गांधीजी ने अंग्रेज़ों का समर्थन किया तथा भारतीयों को सेना में शामिल होने के लिये प्रोत्साहित किया, जिसके लिये उन्हें कुछ लोग 'सेना में भर्ती करने वाला सार्जेंट' भी कहने लगे थे।
- प्रथम विश्व युद्ध में अंग्रेज़ों के समर्थन करने के कारण ब्रिटिश सरकार ने 1915 में गांधीजी को 'कैसर-ए-हिंद' की उपाधि प्रदान की।
- भारत आने पर गांधीजी ने साबरमती नदी के किनारे 'सत्याग्रह आश्रम/साबरमती आश्रम' की स्थापना की। इसका उद्देश्य रचनात्मक कार्यों को प्रोत्साहन देना था।
- गांधीजी का भारतीय राजनीति में एक प्रभावशाली नेता के रूप में उदय उत्तरी बिहार के चंपारण आंदोलन, अहमदाबाद के श्रमिक विवाद आंदोलन तथा गुजरात के खेड़ा कृषक आंदोलन का सफलतापूर्वक नेतृत्व करने के पश्चात् हुआ।

भारत में गांधीजी के प्रारंभिक सत्याग्रह

चंपारण सत्याग्रह, 1917

- बिहार के चंपारण में गांधीजी ने सत्याग्रह का पहला प्रयोग 1917 में किया। चंपारण में सत्याग्रह प्रारंभ करने के दो प्रमुख कारण थे- चंपारण में नील बागान के मालिकों द्वारा 'तकावी ऋण' और 'तिनकठिया व्यवस्था' (कृषकों को अपनी ज़मीन के 3/20वें भाग पर नील की खेती करना अनिवार्य) के कारण किसानों की स्थिति बहुत दयनीय थी।
- 19वीं सदी के अंत में जर्मनी में रासायनिक रंगों (डाई) का विकास हो गया था जिससे भारतीय कृषकों द्वारा उगाए गए नील की मांग ठप हो चुकी थी। परिणामत: चंपारण के बागान मालिक नील की खेती बंद करने को विवश हो गए। यूरोपीय बागान मालिकों ने इस स्थिति का फायदा उठाया तथा लगान व गैर-कानूनी अबवाब की दर मनमाने ढंग से बढ़ा दी। 1917 में चंपारण के एक किसान राजकुमार शुक्ल ने इस अवस्थिति से गांधीजी को अवगत कराया।

9.3 अन्य महत्त्वपूर्ण आंदोलन (Other Important Movements)

राष्ट्रीय आंदोलन में मध्यवर्ग की भूमिका

- भारतीय समाज में मध्यवर्ग का विकास आधुनिक शिक्षा और संस्थाओं के विकास से जुड़ा हुआ है। ब्रिटिश द्वारा स्थापित न्याय प्रणाली, प्रशासनिक व्यवस्था, सेना, शिक्षा व्यवस्था के तहत कार्य करने वाले अफसर-कर्मचारी, नई अर्थव्यवस्था में वाणिज्य व्यापार करने वाले लोग, ज़मींदार वर्ग आदि इस वर्ग के सदस्य थे। अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त भारतीयों ने सामाजिक और धार्मिक सुधार का जो आंदोलन 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में चलाया, वही आंदोलन आगे बढ़ते हुए ब्रिटिश द्वारा किये जाने वाले आर्थिक शोषण के विरुद्ध खड़ा हो गया।
- आर्थिक शोषण की मीमांसा करके दादाभाई नौरोजी सरीखे मध्यवर्गीय लोगों ने आरंभ में नरमदलीय मांगों के रूप में राष्ट्रीय आंदोलन को जन्म दिया। एक राजनीतिक आंदोलन चलाने के लिये कांग्रेस की स्थापना अखिल भारतीय राजनीतिक संस्था के रूप में की गई। इसके संस्थापक सदस्यों में वकील, शिक्षक, पत्रकार और पूंजीपति वर्ग से लोग शामिल थे।
- यही कांग्रेस धीरे-धीरे नरमदलीय सांविधानिक मांगों से निकलकर गरमदलीय स्वदेशी और बहिष्कार का आंदोलन चलाने लगी और उसने स्वायत्त शासन के रूप में 'स्वराज' की मांग की और उसके लिये आंदोलन किया।
- गांधीजी के नेतृत्व में मध्यवर्ग ने आगे बढ़कर संपूर्ण राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व संभाला बल्कि सक्रिय कार्यकर्त्ता के रूप में राष्ट्रीय आंदोलन में दलित वर्ग, मज़दूर वर्ग, महिला वर्ग तथा आदिवासी को भी शामिल करने और उन्हें राजनीतिक रूप से जागरूक बनाने में अपना अहम योगदान दिया।
- गांधीजी द्वारा चलाए गए असहयोग, सविनय और भारत छोड़ो आंदोलन में न केवल मध्यवर्ग ने अहम भूमिका निभाई बल्कि समाज के अन्य वर्गों ने भी अपना व्यापक योगदान देकर इन आंदोलनों को सफल बनाया और भारत को स्वतंत्र करने के लिये अंग्रेज़ों को विवश किया।
- मध्यवर्ग की नकारात्मक भूमिका सांप्रदायिकता और उससे जनित विभाजन में देखी जा सकती है। चूँकि यह मध्यवर्ग ही था जिसने आज़ादी के सपने देखे और उसे फलीभूत किया। इसलिये वह सांप्रदायिकता और विभाजन के लिये भी उतना ही उत्तरदायी है।

राष्ट्रीय आंदोलन में स्त्रियों की भागीदारी

- भारत में नवजागरण आंदोलन ने कन्या-शिशु हत्या पर प्रतिबंध, सती का उन्मूलन और विधवाओं के पुनर्विवाह को कानूनी दायरे में लाने के लिये महती प्रयास किया।
- स्त्रियों के संबंध में 1891 का एज ऑफ कन्सेंट बिल (विवाह-आयु संबंधी विधेयक ने लड़कियों के लिये विवाह की आयु 10 से बढ़ाकर 12 वर्ष कर दी जिसका रूढ़िवादी सुधारकों ने विरोध इस आधार पर किया कि भारतीय सामाजिक रीति-रिवाजों में ब्रिटिश सरकार हस्तक्षेप ना ही करे तो अच्छा।
- स्त्री-शिक्षा के आंदोलन ने स्त्रियों के लिये कुछ प्रगति के द्वार खोले। इसकी पहल कलकत्ता में राधाकांत देव जैसे व्यक्तियों और स्कूल बुक सोसायटी ने की। आगे चलकर केशव चंद्र सेन और ब्रह्म समाज ने, पश्चिम भारत में महादेव गोविंद रानाडे और प्रार्थना समाज ने, उत्तर भारत में स्वामी दयानंद और आर्य समाज ने तथा मद्रास में एनी बेसेंट और थियोसोफिकल सोसायटी ने की।
- गवर्नर जनरल की काउंसिल के विधि सदस्य जे.ई.डी. बेथ्यून ने 1849 में बेथ्यून स्कूल की स्थापना की जो कलकत्ता का सबसे प्रसिद्ध बालिका विद्यालय बन गया।
- आधुनिक शिक्षा से लैस भारतीय महिलाओं ने राष्ट्रवादी आंदोलन में अपना समुचित योगदान दिया।
- 1882 में बरार की मराठी स्त्री ताराबाई शिंदे ने 'ए कम्पेरिजन बिटवीन वुमेन एंड मेन' नाम से पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने पुरुषों को सारे अधिकार और स्त्रियों को सभी बुराइयों के लिये दोषी माने जाने का विरोध किया।
- पंडिता रमाबाई जो ब्राह्मण थी लेकिन एक शूद्र से शादी की। बाद में विधवा होकर सामाजिक रीति को तोड़ते हुए आयुर्विज्ञान पढ़ने इंग्लैंड गईं। उन्होंने बंबई में एक विधवा सदन की स्थापना की जिसे बाद में पूना स्थानांतरित कर दिया गया।
- कांग्रेस ने स्त्री-प्रश्न को 1917 तक सीधे नहीं उठाया, ठीक वैसे ही जैसे उसने छुआछूत के मुद्दे को नहीं उठाया था।
- यद्यपि 1875 में 'वंदे मातरम' जैसा गीत लिखकर इस बात की घोषणा कर दी गई थी कि राष्ट्र की छवि तक स्त्री की ही होगी। इस गीत को सर्वप्रथम 1896 में रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में गाया था।
- पहली बार स्वदेशी आंदोलन में महिलाओं ने सक्रिय रूप से किसी राजनीतिक आंदोलन में भाग लिया। सरला देवी चौधरानी जैसी महिलाओं ने अग्रणी भूमिका निभाई। कुछ स्त्रियों ने क्रांतिकारी आंदोलन में भी भाग लिया। इसके पश्चात् प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान 1917 में एक महिला एनी बेसेंट को कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया।
- 1925 में सरोजिनी नायडू को कांग्रेस अध्यक्ष बनाया गया जो कांग्रेस अध्यक्ष बनने वाली प्रथम भारतीय महिला थीं। इसके पूर्व उन्होंने

9.4 स्वतंत्रता एवं विभाजन की ओर
(Towards Independence and Partition)

सांप्रदायिक राजनीति

मुस्लिम वर्ग

- भारतीय मुस्लिम वर्ग में आधुनिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार थोड़े समय पश्चात् हुआ। उन्होंने हिंदुओं की अपेक्षा ब्रिटिश प्रणाली में समायोजन या अपना सामाजिक-धार्मिक सुधार लगभग 50 वर्ष पश्चात् किया।
- इस प्रकार मुस्लिम वर्ग भारत में हिंदुओं की अपेक्षा आधुनिकीकरण की दौड़ में पिछड़ गया। इस बात का फायदा मुस्लिमों के संप्रदायीकरण करने में उनके नेताओं और अंग्रेज़ों दोनों ने उठाया।
- 1885 में कांग्रेस की स्थापना के बाद सैयद अहमद खाँ ने उसे हिंदू दल बताते हुए मुसलमान विरोधी कहा तथा उसका विरोध किया।
- 1906 में मुस्लिम लीग का गठन, मुसलमानों के लिये राजनीतिक अधिकारों की मांग करने के लिये किया गया।
- 1905 में बंगाल के विभाजन ने बंगाल को हिंदू बाहुल्य और मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र में बाँट दिया जो कि सांप्रदायिकता की दिशा में ब्रिटिश द्वारा बढ़ाया गया एक कदम था।
- 1909 में ब्रिटिश सरकार ने पृथक निर्वाचन मंडल का प्रावधान कर इसे और पुख्ता कर दिया। इसके तहत चुनाव क्षेत्रों, मतदाताओं और निर्वाचित उम्मीदवारों को धर्म के आधार पर समूहों में बाँट दिया गया।
- 1916 में मुस्लिम लीग का समर्थन प्राप्त करने के लिये कांग्रेस ने अस्थायी रूप में पृथक निर्वाचन मंडल की मांग मान ली।
- खिलाफत आंदोलन के दौरान भारतीय राष्ट्रवाद और इस्लामी विश्व बंधुत्व साथ-साथ आगे बढ़ते दिखे लेकिन असहयोग आंदोलन वापस लेने के साथ सांप्रदायिकता ने भारतीय राजनीति में प्रवेश किया।
- साइमन कमीशन का बहिष्कार करने के समय राष्ट्रीय एकता स्थापित करने का सुअवसर मिला था। जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिमों ने संयुक्त निर्वाचन मंडल स्वीकार कर लिया था लेकिन कुछ ही समय पश्चात् कांग्रेस और लीग के रास्ते अलग हो गए और जिन्ना ने अपने प्रसिद्ध 14 सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा कर दी।

पाकिस्तान की उत्पत्ति

- 1937 के चुनावों में ज़बरदस्त पराजय के पश्चात् मुस्लिम लीग ने 'इस्लाम खतरे में है' का नारा दिया।
- मार्च 1940 के अपने लाहौर अधिवेशन में मुस्लिम लीग ने द्विराष्ट्र सिद्धांत के आधार पर मुसलमानों के लिये अलग संप्रभु राज्य की मांग की।
- ब्रिटिश ने भी 'फूट डालो और राज करो' की नीति के तहत उनकी मांग का समर्थन किया।
- क्रिप्स मिशन ने 'लोकल ऑप्शन' का प्रस्ताव देकर भारत के बँटवारे की बात अप्रत्यक्ष तौर पर रखी, जिसके तहत यदि किसी प्रांत को भारत का संविधान स्वीकार्य नहीं होगा तो वह ब्रिटेन से सीधे बात कर सकेगा।

वेवेल योजना तथा शिमला सम्मेलन *(1945)*

- अक्तूबर 1943 में लिनलिथगो की जगह लॉर्ड वेवेल भारत के वायसराय बनकर आए। इस समय भारत की स्थिति अत्यधिक तनावपूर्ण थी।
- 14 जून, 1945 को वेवेल द्वारा 'वेवेल योजना' प्रस्तुत की गई जिसके प्रावधान अधोलिखित थे-
  - केंद्र में एक नई कार्यकारी परिषद् का गठन हो जिसमें वायसराय तथा कमांडर इन चीफ के अलावा शेष सदस्य भारतीय हों।
  - कार्यकारी परिषद् एक अंतरिम व्यवस्था थी जिससे तब तक देश का शासन चलाना था जब तक नए स्थायी संविधान पर आम सहमति नहीं हो जाती है।
- वेवेल प्रस्ताव पर विचार-विमर्श हेतु जून 1945 में शिमला सम्मेलन का आयोजन किया गया। इसमें 21 भारतीय राजनीतिक नेताओं ने हिस्सा लिया। कांग्रेस की तरफ से मौलाना अबुल कलाम आज़ाद तथा मुस्लिम लीग की तरफ से जिन्ना ने प्रतिनिधित्व किया।
- सम्मेलन में जिन्ना द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव कि वायसराय की कार्यकारिणी के सभी मुस्लिम सदस्य लीग से ही लिये जाएँ क्योंकि मुस्लिम लीग ही सभी मुसलमानों की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है, यह सम्मेलन की असफलता का प्रमुख कारण बना।

नोट: गांधीजी ने सम्मेलन में भाग नहीं लिया, लेकिन वे शिमला में उपस्थित रहे।

शाही नौसेना विद्रोह (18-23 फरवरी, 1946)

- रॉयल इंडियन नेवी के विद्रोह की शुरुआत 18 फरवरी को हुई, जब बंबई में नौसैनिक जहाज़ 'एच.एम.आई.एस. तलवार' के 1100 नाविकों ने नस्लवादी भेदभाव और खराब भोजन के प्रतिवाद में हड़ताल कर दी।
- सैनिकों की मांग यह भी थी कि नाविक बी.सी. दत्त को (जिसे जहाज़ की दीवारों पर भारत छोड़ो लिखने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया गया) रिहा किया जाए।
- नौसेना के इस विद्रोह को बंबई, कराची के नाविकों का पूरा सहयोग मिला।

9.5 आज़ादी के बाद भारत
(India after Independence)

भारतीय रजवाड़ों की रियासतों का एकीकरण

- भारत शासन अधिनियम, 1935 द्वारा सांविधानिक रूप से देशी रियासतों को ब्रिटिश इंडिया से जोड़ने की योजना बनाई गई थी।
- इस अधिनियम के तहत देशी रियासतों को मिलाकर एक संघीय स्वरूप प्रदान करना था।
- वर्ष 1938-39 में देशी रियासतों में नई चेतना का विकास हुआ और बड़ी संख्या में प्रजामंडलों का गठन हुआ।
- जयपुर, कश्मीर, राजकोट, पटियाला, हैदराबाद, मैसूर, त्रावणकोर और उड़ीसा रियासतों में व्यापक स्तर पर संघर्ष हुए। इन व्यापक संघर्षों को शेख अब्दुल्ला, यू.एन. ढेबर, जमनालाल बजाज, जय नारायण व्यास आदि ने नेतृत्व प्रदान किया।
- द्वितीय विश्व युद्ध से उत्पन्न परिस्थितियों में ब्रिटिश इंडिया और देशी रियासतों में कांग्रेस ने कोई भेद नहीं किया और अब रियासतें भी भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में सम्मिलित हो गईं।
- 1939 में लुधियाना में राज्यपाल कॉन्फ्रेंस हुई जिसका अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू को बनाया गया। अब ब्रिटिश इंडिया तथा देशी रियासतों के आंदोलन एक-दूसरे से जुड़ गए।
- द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद देशी रियासतों के एकीकरण की समस्या उठ खड़ी हुई जिसे सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा बड़ी समझदारी और सूझबूझ से सुलझाया गया।
- अधिकांश रियासतों ने कूटनीतिक प्रयासों, सैन्य बल तथा जनआंदोलन के ख़ौफ से भारत में विलय का निर्णय लिया तो वही कुछ रियासतों ने विलय दस्तावेज़ (इंस्ट्रूमेंट ऑफ ऐक्सेशन) पर हस्ताक्षर कर दिये।
- 15 अगस्त, 1947 तक कमोबेश सभी रियासतें भारतीय संघ में शामिल हो गईं। कुछ रियासतें, जैसे- जूनागढ़, हैदराबाद और जम्मू-कश्मीर ने अपनी स्वाधीनता को बनाए रखने का प्रयास किया।

जूनागढ़

- जूनागढ़, सौराष्ट्र के तट पर एक छोटी सी रियासत थी, जो तीन तरफ से भारतीय भू-भाग से घिरी हुई थी। यहाँ के नवाब ने 15 अगस्त, 1947 को अपने राज्य का विलय पाकिस्तान के साथ घोषित कर दिया। हालाँकि, वहाँ की जनता जो कि अधिकांश हिंदू थी, ने भारत में विलय के लिये जनांदोलन छेड़ दिया।
- नवाब भागने के लिये मजबूर हो गया और तत्कालीन परिस्थिति में वहाँ के दीवान शहनवाज़ भुट्टो ने भारत सरकार को हस्तक्षेप के लिये आमंत्रित किया।
- फरवरी 1948 में रियासत में एक जनमत संग्रह कराया गया जो भारत के पक्ष में आया। इस प्रकार जूनागढ़ रियासत का भारत में विलय हो गया।

हैदराबाद

- यह भारत की सबसे बड़ी रियासत थी। हैदराबाद के निज़ाम ने नवंबर 1947 में भारत सरकार के साथ यथास्थिति संधि पर हस्ताक्षर किये। सरकार को उम्मीद थी कि निज़ाम अपनी रियासत में एक प्रतिनिधिमूलक सरकार का मार्ग प्रस्तुत करेगा, जिससे बाद में विलय आसान हो जाएगा।
- इसी बीच यहाँ की जनता ने निज़ाम के विरुद्ध आंदोलन छेड़ दिया, इससे रियासत में कुछ अलगाववादी उपद्रव प्रारंभ हुए, जिससे भारतीय सेना 'ऑपरेशन पोलो' या 'कैटरपिलर' के तहत हैदराबाद में 13 सितंबर, 1948 को प्रवेश कर गई। अंततः निज़ाम ने आत्मसमर्पण कर दिया।
- नवंबर 1948 में भारतीय संघ में विलय को निज़ाम ने स्वीकार कर लिया। सरकार ने उसे औपचारिक शासक के रूप में बहाल रखा तथा उसकी ज़्यादातर संपत्ति को अपने पास रखने की अनुमति दे दी।

जम्मू-कश्मीर

- जम्मू-कश्मीर भारत की एक ऐसी रियासत थी जो उपर्युक्त दोनों रियासतों से भिन्न थी। उसकी भौगोलिक स्थिति के कारण राज्य की सीमा भारत तथा पाकिस्तान दोनों से मिलती थी। यहाँ का शासक हिंदू तथा अधिकांश जनता मुस्लिम थी।
- शासक हरि सिंह किसी एक देश में विलय होने के बजाए स्वतंत्र रहना चाहते थे, लेकिन नेशनल कॉन्फ्रेंस के नेता शेख अब्दुल्ला भारत में कश्मीर का विलय चाहते थे जबकि भारत चाहता था कि कश्मीरी जनता जनमत संग्रह द्वारा इसका निर्णय ले।
- 22 अक्तूबर, 1947 को पाकिस्तानी सैनिक अफसरों के नेतृत्व में पठान कबाइलियों ने कश्मीर में घुसपैठ कर दी। 26 अक्तूबर, 1947 में कश्मीर को बचाने के लिये राजा हरि सिंह ने 'जम्मू-कश्मीर का भारत में विलय' नामक विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये और शेख अब्दुल्ला को रियासत का प्रमुख बनाया गया।
- भारतीय सेना ने पठान कबाइलियों को खदेड़ा। हालाँकि, राज्य के कुछ हिस्सों पर उनका नियंत्रण बना रहा। भारत तथा पाकिस्तान के बीच व्यापक युद्ध के खतरे को देखते हुए तत्कालीन भारत सरकार 30 दिसंबर, 1947 को माउंटबेटन की सलाह पर कश्मीर समस्या को संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् में भेजने के लिये तैयार हो गई जिसमें पाकिस्तान द्वारा अतिक्रमण किये गए क्षेत्रों को खाली करवाने का आग्रह किया गया था।

इकाई
X

- ऐतिहासिक प्रणाली, शोध कार्य प्रणाली तथा इतिहास लेखन
- इतिहास का विषय विस्तार, सीमा और महत्त्व।
- इतिहास में वस्तुनिष्ठता और पूर्वाग्रह।
- अंवेषणात्मक संक्रिया, इतिहास में आलोचना, संश्लेषण तथा प्रस्तुति
- इतिहास और इसके सहायक विज्ञान।
- इतिहास : विज्ञान, कला या सामाजिक विज्ञान?
- इतिहास में कारण-कार्य-संबंध और कल्पना।
- क्षेत्रीय इतिहास का महत्त्व।
- भारतीय इतिहास में आधुनिक प्रवृत्तियाँ।
- शोध कार्यप्रणाली।
- इतिहास में प्राक्कल्पना।
- प्रस्तावित शोध का क्षेत्र।
- स्रोत-आँकड़ों का संग्रह—प्राथमिक/द्वितीयक, मूल तथा पारगमनीय स्रोत।
- इतिहास शोध में प्रवृत्तियाँ।
- वर्तमान भारतीय इतिहास लेखन।
- इतिहास में विषय का चयन।
- नोट्स लेना, संदर्भ निर्देश, पाद टिप्पणियाँ और ग्रंथ-सूची।
- थीसिस/शोध प्रबंध और निर्दिष्ट कार्य को पूरा करना
- साहित्यिक चोरी, बौद्धिक बेईमानी और इतिहास लेखन।
- ऐतिहासक लेखन का प्रारम्भ— यूनानी, रोमन एवं गिरजाघर संबंधी इतिहास लेखन।
- पुनर्जागरण और इतिहास लेखन पर इसका प्रभाव।
- इतिहास लेखन के नकारात्मक तथा सकारात्मक समर्थक।
- इतिहास लेखन में बर्लिन क्रांति— वी. रैंक।
- इतिहास का मार्क्सवादी दर्शन— वैज्ञानिक भौतिकवाद।
- इतिहास का चक्रीय सिद्धांत— औसवाल्ड स्पेंगलर।
- चुनौती एवं प्रत्युत्तर सिद्धांत— अर्नोल्ड जोसफ टॉयनबी।
- इतिहास में उत्तर-आधुनिकतावाद।

10 ऐतिहासिक प्रणाली, शोध कार्य प्रणाली तथा इतिहास लेखन
(Historical Method, Research Methodology & Historiography)

इतिहास का विषय विस्तार, सीमा और महत्त्व

- आरंभ में इतिहास विषय दर्शनशास्त्र का अंग था। इसके पश्चात् उससे पृथक होकर राजनीति शास्त्र के तहत इतिहास का अध्ययन किया जाने लगा। वर्तमान में इतिहास विषय का अध्ययन एक स्वतंत्र विषय के रूप में किया जाता है।
- एक समय था जब घटनामात्र को इतिहास समझा जाता था। लेकिन पुनर्जागरण के पश्चात् इतिहास के तहत अब राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों को भी लिया जाने लगा।
- यहाँ तक कि किसी ऐतिहासिक घटनाक्रम से संबंधित व्यक्तियों की मानसिक स्थिति का भी अवलोकन किया जाने लगा जिसके फलस्वरूप इतिहास का विषय विस्तार दर्शनशास्त्र और मनोविज्ञान तक हो गया।
- इतिहास की विषयवस्तु का सीमा-विस्तार प्रत्यक्षवादी इतिहासकारों नेबूर और रांके ने किया। उन्होंने सार्वभौमिक इतिहास लेखन पर बल दिया। सीले ने इसके विपरीत राजनीतिक घटनाओं तक इतिहास को सीमित करना चाहा। उनके आलोचकों ने इतिहास की विषयवस्तु में शासन, कानून, परंपरा, धर्म, कला आदि सबको समाविष्ट कर इतिहास को व्यापक आयाम दिया।
- हर्डर जैसे रूमानी इतिहासकारों ने भूगोल, जलवायु तथा पर्यावरण को भी इतिहास की विषय-वस्तु में शामिल कर उसका क्षितिज विस्तृत किया।
- टॉयनबी जैसे इतिहासकारों ने प्राचीन से लेकर आधुनिक काल तक की संस्कृतियों और सभ्यताओं का इतिहास लिखा, ना कि राष्ट्र-राज्यों का राजनीतिक इतिहास। इस प्रकार उन्होंने इतिहास का विषय-विस्तार कर उसकी सीमा को विस्तृत किया।
- 'मनुष्य का कार्य-व्यवहार ही इतिहास की विषयवस्तु होनी चाहिये', बताने वाले कालिंगवुड के अनुसार ऐतिहासिक ज्ञान, अतीत में मनुष्य के मस्तिष्क में सुरक्षित ज्ञान है।
- हीगल के अनुसार– 'संस्कृति, राष्ट्र तथा राजनीतिक आंदोलन, जनान्दोलन आदि इतिहास की विषयवस्तु हो सकते हैं।
- जहाँ तक इतिहास के महत्त्व की बात है तो वह स्वयं सिद्ध है। वस्तुत: इतिहास अतीत के क्रमबद्ध अध्ययन से वर्तमान को यह अवसर देता है कि वह अतीत से सीख लेकर वर्तमान और भविष्य को सँवार सके। यद्यपि हीगल का मत है कि 'इतिहास की सबसे बड़ी सीख यही है कि इतिहास से कोई सीख नहीं लेता।'
- इतिहास के महत्त्व को लेकर विभिन्न विचारकों में मत-भिन्नता भी पाई जाती है। 'यदि इतिहास सिर्फ वंशावली और तिथि है तो वह टेलिफोन डाइरेक्ट्री के समान है, निरर्थक। इसलिये वर्तमान को समझने के लिये, बीते कल की खोज करनी होगी।' –के.एम. पन्निकर
- 'यदि आप इतिहास नहीं जानते तो आप कुछ भी नहीं जानते। आप वे पत्तियाँ हैं जिसे यह पता ही नहीं कि वे पेड़ का हिस्सा थीं'।

  –पर्ल एस बक
- इतिहास की महत्ता प्रतिपादित करते हुए एडमंड बर्क ने तो यहाँ तक कह दिया कि 'वो लोग जो इतिहास नहीं जानते हैं, वे उसे दोहराने के लिये अभिशप्त हैं।'
- इसके विपरीत जॉर्ज बर्नार्ड शॉ उपहासात्मक लहज़े में कहते हैं कि 'हम अपने अनुभव से यही सीखते हैं कि हम अपने अनुभव से कभी कुछ नहीं सीखते।'
- इतिहास के महत्त्व को रेखांकित करते हुए सर जॉन सीले कहते हैं कि 'जब हम इतिहास पढ़ते हैं तो हम अतीत के बारे में नहीं, बल्कि भविष्य के बारे में पढ़ते हैं।'
- इसी प्रकार कालिंगवुड इतिहास के उद्देश्य को आत्मज्ञान से जोड़ते हुए उसकी महत्ता प्रतिपादित करते हैं।
- ई.एच. कार के अनुसार इतिहास का महत्त्व इसमें है कि इतिहास अतीत और वर्तमान के मध्य एक चिरंतन संवाद है और इतिहासकार का मुख्य कार्य वर्तमान की पहेली को समझने की कुंजी के रूप में अतीत को भलीभाँति समझना है।

इतिहास में वस्तुनिष्ठता और पूर्वाग्रह

- वस्तुनिष्ठता से आशय है इतिहास में तथ्यों पर अधिक ज़ोर देना। तथ्य को सामने रखकर इतिहास लिखना। लेकिन ऐसे इतिहास लेखन में घटनाओं की सूचना तो संगृहीत की जा सकती है, उसकी व्याख्या नहीं।
- वस्तुत: इतिहास मात्र घटनाक्रम नहीं है और न ही वह केवल इतिहासकार की कपोल कल्पना। एक समय था जब इतिहास लेखन में वस्तुनिष्ठता पर अतिशय ज़ोर दिया गया। ग्राडग्रिंड का कहना था 'मुझे तथ्य चाहिये...जीवन में हमें सिर्फ तथ्यों की आवश्यकता है'। इसी विचार को आगे बढ़ाते हुए रैंक अपना मत व्यक्त करता है– 'इतिहासकार का दायित्व इतिहास को सिर्फ उस रूप में दिखाना है जैसा कि वह सचमुच में था'। यानी रैंक इतिहास में वस्तुनिष्ठता पर अतिशय बल देता है।
- पूर्वाग्रह का मतलब इतिहास लेखक का अपने लेखन में किसी पक्ष में खड़े होना है। कहा तो यह भी जाता है कि तथ्य संग्रह के दौरान ही शोधकर्त्ता (लेखक) का पूर्वाग्रह कारक बन जाता है। इसे रेमों आरों ने और स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'इतिहासकार एक ही

विविध

भारतवर्ष
सभा और समिति
वर्णाश्रम
वेदान्त
पुरुषार्थ
ऋण
संस्कार
यज्ञ
गणराज्य
जनपद
कर्म का सिद्धान्त
दंडनीति/अर्थशास्त्र/सप्तांग
धर्मविजय
स्तूप/चैत्य/विहार
नागर/द्रविड़/बेसर
बोधिसत्त्व/तीर्थंकर
अलवार/नयनार
श्रेणी
भूमि-छिद्र-विधान-न्याय
कर-भोग-भाग
विष्टि
स्त्रीधन
स्मारक पत्थर
अग्रहार
आइन-ए-दहसाला
परगना
शाहना-ए-मण्डी
महलवारी
हिन्द स्वराज
वणिकत्ववाद
आर्थिक राष्ट्रवाद
खिलाफत
सुलह-ए-कुल
तुर्कान-ए-चहलगानी
वतन
बलूता
तकावी
इक्ता
जज़िया
ज़कात
मदद-ए-माश
अमरम
राय-रेखो
जंगम/दास
मदरसा/मकतब
चौथ/सरदेशमुखी
सराय
पोलिगर
जागीर/शरियत
दस्तूर
मंसब (ओहदा)
देशमुख
नाडु/उर
उलेमा
फरमान
सत्याग्रह
स्वदेशी
पुन:परिवर्तनवाद
सम्प्रदायवाद
प्राच्यवाद
प्राच्य निरंकुशतावाद
वि-औद्योगिकीकरण
भारतीय पुनर्जागरण
आर्थिक अपवहन
उपनिवेशवाद
परमोच्चशक्ति
द्विशासनतंत्र
संघवाद
उपयोगितावाद
फिल्टर सिद्धान्त
अग्रवर्ती नीति
राज्य लोप सिद्धान्त
सहायक सन्धि (मैत्री)
सुधर्मवाद
भूदान
पंचशील
मिश्रित अर्थव्यवस्था
समाजवाद
हिन्दू कोड बिल
ऐतिहासिक पद्धतियाँ
साहित्यिक चोरी
इतिहास लेखन में आचार और नैतिकता

संकल्पनाएँ, विचार और अवधियाँ/शब्दावलियाँ
(Concepts, Ideas & Terms)

संकल्पनाएँ, विचार और अवधियाँ/शब्दावलियाँ

प्राचीन भारत	मध्यकालीन भारत	आधुनिक भारत
भारतवर्ष	आइन-ए-दहसाला	महलवाड़ी
सभा और समिति	परगना	हिंद-स्वराज
वर्णाश्रम	शहना-ए-मंडी	वणिकत्ववाद
वेदांत	सुलह-ए-कुल	आर्थिक राष्ट्रवाद
पुरुषार्थ	तुर्कान-ए-चहलगानी	खिलाफत
ऋण	वतन	सत्याग्रह
संस्कार	बलूता	स्वदेशी
यज्ञ	तकावी	पुनः परिवर्तनवाद
गणराज्य	इक्ता	संप्रदायवाद
जनपद	जजिया	प्राच्यवाद
कर्म का सिद्धांत	जकात	प्राच्य-निरंकुशतावाद
दंडनीति	मदद-ए-माश	वि-औद्योगीकीकरण
अर्थशास्त्र	अमरम	भारतीय पुनर्जागरण
सप्तांग	राय-रेखो	आर्थिक अपवहन
धर्मविजय	जंगम	उपनिवेशवाद
स्तूप	दास	परमोच्चशक्ति
चैत्य	मदरसा	द्विशासनतंत्र
विहार	मकतब	संघवाद
नागर	चौथ	उपयोगितावाद
द्रविड़	सरदेशमुखी	फिल्टर सिद्धांत
बेसर	सराय	अग्रवर्ती नीति
बोधिसत्व	पोलीगर	राज्य लोप सिद्धांत
तीर्थंकर	जागीर	सहायक संधि (मैत्री)
अलवार	शरीयत	सुधर्मवाद
नयनार	दस्तूर	भूदान
श्रेणी	मंसब (ओहदा)	पंचशील
भूमि-छिद्र-विधान-न्याय	देशमुख	मिश्रित अर्थव्यवस्था
कर	नाडु	समाजवाद
भोग	उर	हिन्दूकोड बिल
भाग	उलेमा	ऐतिहासिक पद्धतियाँ
विष्टि	फरमान	साहित्यिक चोरी
स्त्रीधन		इतिहास लेखन में
स्मारक पत्थर		आचार और नैतिकता
अग्रहार		

भारतवर्ष

वर्तमान भारतीय उपमहाद्वीप के लिये प्राचीनकाल में भारतवर्ष नाम दिया गया था, जिससे वर्तमान भारत का नाम पड़ा। माना जाता है कि भरत जन (आर्य कबीले) जो आर्य और स्थानीय कबीलों में सबसे शक्तिशाली थे, उनके नाम पर 'भारत' नाम पड़ा। फारसियों (पारसियों) ने इस देश को 'हिन्द' या 'हिन्दुस्तान' कहा जबकि यूनानियों ने 'इंडिया' बताया था।

सभा-समिति

वैदिक कालीन सभा-समिति कबिलाई जनतांत्रिक संस्थाएँ थीं। सभा कुलीन लोगों से बनती थी जबकि समिति के सदस्य कबीले के सभी लोग होते थे। सभा न्याय करती थी। समिति राजा का चुनाव करती थी, जो कबायली युद्ध का नेतृत्व करता था। सभा-समिति में आरंभ में महिलाएँ भी भाग लेती थीं, जिनका बाद के काल में निषेध कर दिया गया। अथर्ववेद में सभा-समति को प्रजापति की दो पुत्रियाँ कहा गया है।

वर्णाश्रम

वर्णाश्रम शब्द दो शब्दों का द्योतक है- वर्ण और आश्रम। हिन्दू धर्म संस्कृति की दो प्रमुख विशेषताएँ इस शब्द में समाहित हैं। वर्ण चार होते हैं- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और आश्रम भी चार ही होते हैं- ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ, संन्यास। ऋग्वेद के दशम मंडल के पुरुष सूक्त में चार वर्णों का उल्लेख मिलता है। आश्रम व्यवस्था उत्तर वैदिक काल में विकसित हुई।

वेदांत

वेदों का अंतिम भाग होने के कारण इन्हें वेदांत कहा गया जो कि वस्तुतः उपनिषद हैं। सभी उपनिषद किसी-न-किसी वेद से जुड़े हुए हैं। उपनिषदों में धर्म के दार्शनिक पक्ष की विवेचना की गई है। इसमें ब्राह्मणिक कर्मकांड की आलोचना मिलती है। उपनिषद आत्मा की पहचान और ब्रह्म से उसके संबंध पर गहन विचार-विमर्श करते हैं। 'अहं ब्रह्मास्मि' यानी मैं ही ब्रह्म हूँ, यह उपनिषद की ही घोषणा है।

पुरुषार्थ

वैदिक संस्कृति का प्रमुख अंग पुरुषार्थ भी है। यह भी संख्या में चार हैं- अर्थ, काम, धर्म, मोक्ष। जन्म से लेकर मृत्यु तक इन्हीं पुरुषार्थों से मानव जीवन परिचालित होता है। वैदिक मनीषा ने धर्मयुक्त जीवन पर बल देते हुए मोक्ष को मानव जीवन का परम लक्ष्य निर्धारित किया था।

घर बैठे IAS/PCS की संपूर्ण तैयारी करने के लिये आपका स्वागत है

Drishti Learning App पर

GET IT ON Google Play

अपने एंड्रॉयड फोन पर आज ही इंस्टॉल करें

ऐप की विशेषताएँ

- टीम दृष्टि द्वारा दी जाने वाली सभी सुविधाएँ एक ही मंच पर।
- ऑनलाइन, पेनड्राइव मोड में कक्षाएँ उपलब्ध।
- प्रिलिम्स और मेन्स की टेस्ट सीरीज़ भी ऐप के माध्यम से उपलब्ध।
- सभी पुस्तकें, मैगजीन, डिस्टेंस लर्निंग प्रोग्राम के नोट्स देखने व मंगवाने की सुविधा।

ऑनलाइन कोर्स की विशेषताएँ

- घर बैठे देश के सर्वोत्कृष्ट अध्यापकों से पढ़ने की सुविधा।
- अब दिल्ली या किसी बड़े शहर जाकर पढ़ने की मजबूरी नहीं।
- IAS और PCS के कोर्स उपलब्ध।
- ऑनलाइन कोर्स करने के बाद, क्लासरूम कोर्स में प्रवेश लेने पर शुल्क में विशेष छूट।
- हर क्लास अपनी सुविधा से 3 बार देखने की सुविधा।
- उत्तर लिखकर चेक कराने तथा संदेह-समाधान की व्यवस्था भी शीघ्र उपलब्ध।
- कई विषयों के कोर्स ऑनलाइन और पेनड्राइव मोड में भी उपलब्ध।

दृष्टि आई.ए.एस. (दिल्ली शाखा) का पता
641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-09
8448485519, 87501 87501, 011-47532596

दृष्टि आई.ए.एस. (प्रयागराज शाखा) का पता
ताशकंद मार्ग, निकट पत्रिका चौराहा, सिविल लाइन्स, प्रयागराज
8448485518, 8750187501, 8929439702

दृष्टि आई.ए.एस. (राजस्थान शाखा) का पता
प्लॉट नंबर-45 व 45-A, हर्ष टावर-2, मेन टोंक रोड़, वसुंधरा कॉलोनी, जयपुर राजस्थान-302018
8448485518, 8750187501, 8929439702

दृष्टि पब्लिकेशन्स की प्रमुख पुस्तकें

641, 1st Floor, Dr. Mukherji Nagar, Delhi-9
Ph.: 011-47532596, 87501 87501
Website: www.drishtiias.com
E-mail: booksteam@groupdrishti.com

मूल्य : ₹ 480